पूज्य सद्गुरुदेव के आशीर्वाद तले प्रकाशित

नारायण मंत्र साधना विज्ञान

कृपया ध्यान दें

1. यदि आप साधना सामग्री शीघ्र प्राप्त करना चाहते हैं।
2. यदि आप अपना पता या फोन नम्बर बदलवाना चाहते हैं।
3. यदि आप पत्रिका की वार्षिक सदस्यता लेना चाहते हैं।

तो आप निम्न वाट्सअप नम्बर पर मैसेज भेजें।

450 रुपये तक की साधना सामग्री वी.पी.पी से भेज दी जाती है।

परन्तु यदि आप साधना सामग्री स्पीड पोस्ट से शीघ्र प्राप्त करना चाहते हैं तो सामग्री की न्यौछावर राशि में डाकखर्च 100 रुपये जोड़कर निम्न बैंक खातें में जमा करवा दें एवं जमा राशि की रसीद, साधना सामग्री का विवरण एवं अपना पूरा पता, फोन नम्बर के साथ हमें वाट्सअप कर दें तो हम आपको साधना सामग्री स्पीड पोस्ट से भेज देंगे जिससे आपको साधना सामग्री अधिकतम 5 दिनों में प्राप्त हो जायेगी।

बैंक खाते का विवरण

खाते का नाम	: नारायण मंत्र साधना विज्ञान
बैंक का नाम	: स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया
ब्रांच कोड	: SBIN0000659
खाता नम्बर	: 31469672061

मासिक पत्रिका का वार्षिक मेम्बरशिप ऑफर

1 वर्ष सदस्यता 405/- — हनुमान यंत्र + माला — 405 + 45 (डाक खर्च) = 450

1 वर्ष सदस्यता 405/- — लक्ष्मी यंत्र + माला — 405 + 45 (डाक खर्च) = 450

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :

नारायण मंत्र साधना विज्ञान

गुरुधाम, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी, जोधपुर-342001 (राज.)

फोन नं. : 0291-2433623, 2432010, 2432209, 7960039

आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः
मानव जीवन की सर्वतोन्मुखी उन्नति प्रगति और भारतीय गूढ़ विद्याओं से समन्वित मासिक पत्रिका

|| ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ||
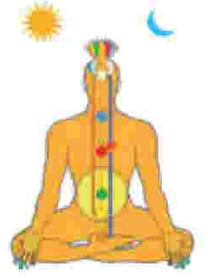
आर्थिक उन्नति, यश, वैभव, कीर्ति प्राप्ति हेतु : कनकधारा यंत्र साधना

घर में किसी भी रोग की समस्या से मुक्ति हेतु : रोग निवारण प्र.

आध्यात्मिक उन्नति एवं मनःशक्ति जागरण के लिए सर्वोपरि : कुण्डलिनी जागरण साधना
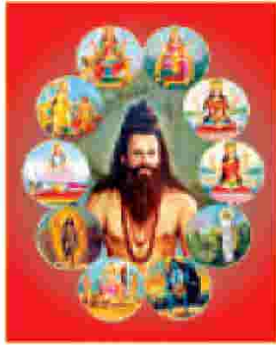
सद्गुरुदेव

स्तम्भ

साधनाएँ

ENGLISH

विशेष

योग

आयुर्वेद

स्वास्थ्य

प्रेरक संस्थापक
डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली
(परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंदजी)

आशीर्वाद
पूजनीया माताजी
(पू. भगवती देवी श्रीमाली)

सम्पादक
श्री अरविन्द श्रीमाली

सह-सम्पादक
राजेश कुमार गुप्ता
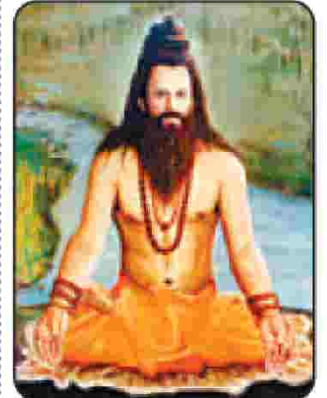
प्रकाशक, स्वामित्व एवं मुद्रक
श्री अरविन्द श्रीमाली
द्वारा
प्रगति प्रिंटर्स
A-15, नारायणा, फेज-1
नई दिल्ली:110028
से मुद्रित तथा
'नारायण मंत्र साधना विज्ञान'
कार्यालय :
हाई कोर्ट कॉलोनी, जोधपुर से
प्रकाशित

मूल्य (भारत में)
एक प्रति 40/-
वार्षिक 405/-

सम्पर्क
सिद्धाश्रम, 306 कोहाट एन्क्लेव, पीतमपुरा, दिल्ली- 011-79675768, 011-79675769, 011-27354368
नारायण मंत्र साधना विज्ञान, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी, जोधपुर-342001 (राज.), फोन नं. : 0291-2433623, 2432010, 7960039
WWW address : http:/www.narayanmantrasadhanavigyan.org E-mail : nmsv@siddhashram.me

नियम

पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाओं का अधिकार पत्रिका का है। इस *'नारायण मंत्र साधना विज्ञान'* पत्रिका में प्रकाशित लेखों से सम्पादक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। तर्क-कुतर्क करने वाले पाठक पत्रिका में प्रकाशित पूरी सामग्री को गल्प समझें। किसी नाम, स्थान या घटना का किसी से कोई सम्बन्ध नहीं है, यदि कोई घटना, नाम या तथ्य मिल जायें, तो उसे मात्र संयोग समझें। पत्रिका के लेखक घुमक्कड़ साधु-संत होते हैं, अत: उनके पते आदि के बारे में कुछ भी अन्य जानकारी देना सम्भव नहीं होगा। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी लेख या सामग्री के बारे में वाद-विवाद या तर्क मान्य नहीं होगा और न ही इसके लिए लेखक, प्रकाशक, मुद्रक या सम्पादक जिम्मेवार होंगे। किसी भी सम्पादक को किसी भी प्रकार का पारिश्रमिक नहीं दिया जाता। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद में जोधपुर न्यायालय ही मान्य होगा। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी सामग्री को साधक या पाठक कहीं से भी प्राप्त कर सकते हैं। पत्रिका कार्यालय से मंगवाने पर हम अपनी तरफ से प्रामाणिक और सही सामग्री अथवा यंत्र भेजते हैं, पर फिर भी उसके बाद में, असली या नकली के बारे में अथवा प्रभाव होने या न होने के बारे में हमारी जिम्मेवारी नहीं होगी। पाठक अपने विश्वास पर ही ऐसी सामग्री पत्रिका कार्यालय से मंगवायें। सामग्री के मूल्य पर तर्क या वाद-विवाद मान्य नहीं होगा। पत्रिका का वार्षिक शुल्क वर्तमान में 405/- है, पर यदि किसी विशेष एवं अपरिहार्य कारणों से पत्रिका को त्रैमासिक या बंद करना पड़े, तो जितने भी अंक आपको प्राप्त हो चुके हैं, उसी में वार्षिक सदस्यता अथवा दो वर्ष, तीन वर्ष या पंचवर्षीय सदस्यता को पूर्ण समझें, इसमें किसी भी प्रकार की आपत्ति या आलोचना किसी भी रूप में स्वीकार नहीं होगी। पत्रिका के प्रकाशन अवधि तक ही आजीवन सदस्यता मान्य है। यदि किसी कारणवश पत्रिका का प्रकाशन बन्द करना पड़े तो आजीवन सदस्यता भी उसी दिन पूर्ण मानी जायेगी। पत्रिका में प्रकाशित किसी भी साधना में सफलता-असफलता, हानि-लाभ की जिम्मेवारी साधक की स्वयं की होगी तथा साधक कोई भी ऐसी उपासना, जप या मंत्र प्रयोग न करें जो नैतिक, सामाजिक एवं कानूनी नियमों के विपरीत हों। पत्रिका में प्रकाशित लेख योगी या संन्यासियों के विचार मात्र होते हैं, उन पर भाषा का आवरण पत्रिका के कर्मचारियों की तरफ से होता है। पाठकों की मांग पर इस अंक में पत्रिका के पिछले लेखों का भी ज्यों का त्यों समावेश किया गया है, जिससे कि नवीन पाठक लाभ उठा सकें। साधक या लेखक अपने प्रामाणिक अनुभवों के आधार पर जो मंत्र, तंत्र या यंत्र (भले ही वे शास्त्रीय व्याख्या के इतर हों) बताते हैं, वे ही दे देते हैं, अत: इस सम्बन्ध में आलोचना करना व्यर्थ है। आवरण पृष्ठ पर या अन्दर जो भी फोटो प्रकाशित होते हैं, इस सम्बन्ध में सारी जिम्मेवारी फोटो भेजने वाले फोटोग्राफर अथवा आर्टिस्ट की होगी। दीक्षा प्राप्त करने का तात्पर्य यह नहीं है, कि साधक उससे सम्बन्धित लाभ तुरन्त प्राप्त कर सकें, यह तो धीमी और सतत् प्रक्रिया है, अत: पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ ही दीक्षा प्राप्त करें। इस सम्बन्ध में किसी प्रकार की कोई भी आपत्ति या आलोचना स्वीकार्य नहीं होगी। गुरुदेव या पत्रिका परिवार इस सम्बन्ध में किसी भी प्रकार की जिम्मेवारी वहन नहीं करेंगे।

प्रार्थना

जिसने अपने ज्ञान रूपी अमृत से समस्त विश्व को पावन किया है, उन नारायण स्वरूप गुरुदेव निखिलेश्वर को मैं भावपूर्ण हृदय से नमन करता हूँ। संसार के अज्ञान रूपी अंधकार के नाश के लिए तथा शिष्यों के कल्याण हेतु हे नरोत्तम ! आप की कृपा से साधकों को साधनाओं में पूर्ण सफलता प्राप्त हो।

कलाकार की श्रेष्ठता

मूर्तिकार अपनी कलाकृति पूर्ण कर चुका तो उसमें कोई कमी ढूंढ़ने के लिये उस मूर्ति को देखने लगा। घण्टों उसमें कोई त्रुटि खोजता रहा पर उसे कोई त्रुटि दृष्टि-गोचर न हुई तो वह बड़ा दुखी हुआ और रोने लगा।

उसे इस प्रकार रोते देखकर उसके मित्र को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने पूछा–''आप क्यों रोने लगे? ऐसा क्या हुआ?'' मूर्तिकार बोला–''मुझे अपनी इस कृति में कोई दोष नजर नहीं आ रहा है।'' मित्र बोला–''यह तो बड़ी प्रसन्नता का विषय है कि मूर्ति सर्वश्रेष्ठ है तथा अनुपम कृति है। इसमें कोई दोष नहीं होना तो आपके लिये लाभप्रद ही है।''

शिल्पकार कहने लगा–''आज तक मेरी प्रगति का आधार यही रहा है कि मैं अपनी कलाकृति में जो त्रुटि पाता था उसे अगली में नहीं दोहराता था। इस प्रकार मेरी कला निखरती गई। मुझे निरंतर प्रगति करने की प्रेरणा मिलती रही। आज मेरी यह प्रगति अवरुद्ध हो गई है। मैं प्रगति चाहता हूँ, पूर्णता नहीं।

यह शिल्पकार डेनमार्क का प्रसिद्ध कलाकार बर्टन थोवार्डसन था। पूर्णता में अपूर्णता ढूंढने के कारण ही वह श्रेष्ठ मूर्तिकार बन सका था।
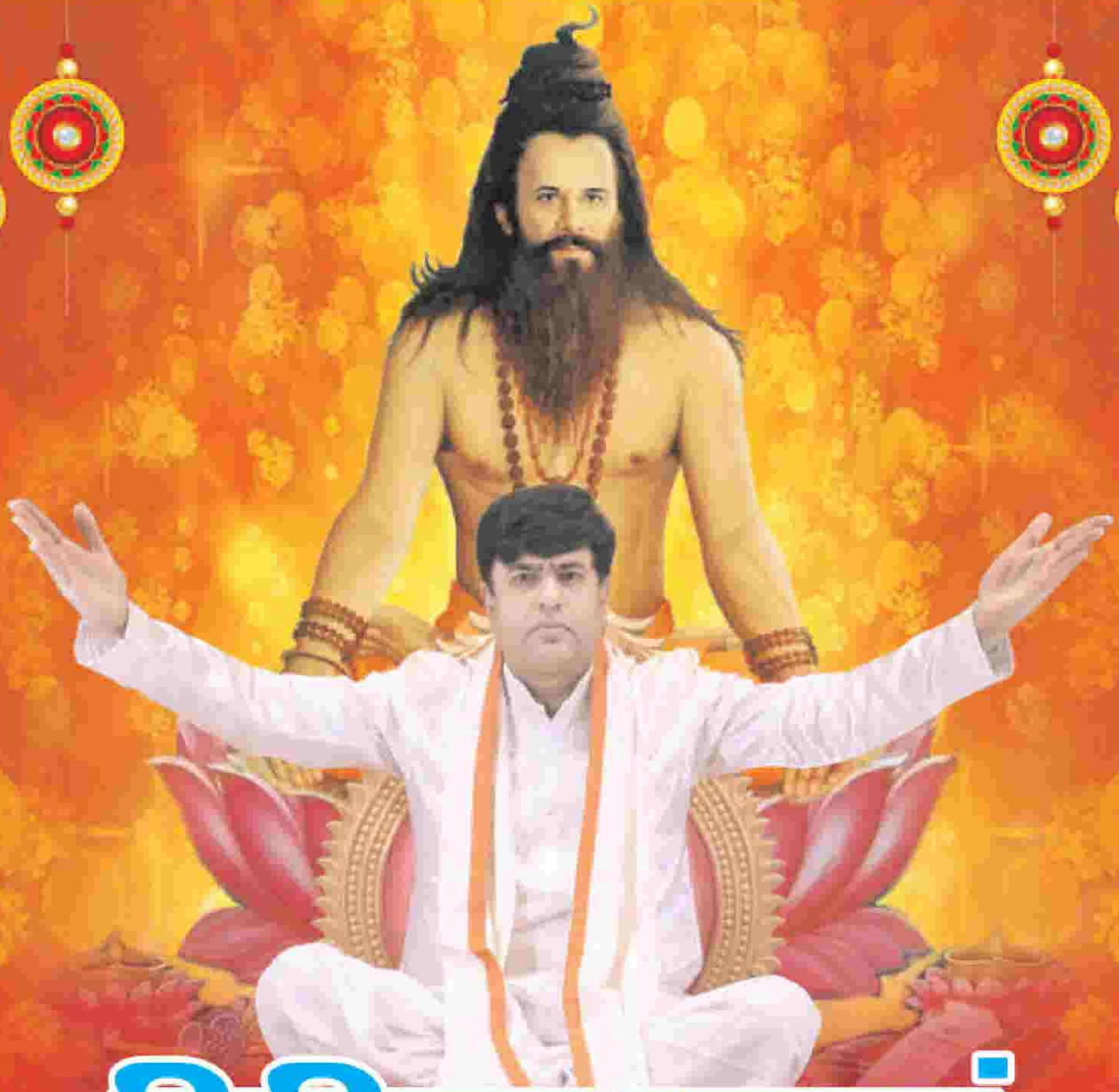
निखिल स्वरूपं एकोहि लक्ष्यं

श्री सद्गुरु चरण कमलेभ्यो नमः

शिष्य का जीवन गुरु से जुड़कर ही पूर्ण बनता है, जीवन की यात्रा तो संसार में जिसने भी जन्म लिया है, वह करता ही है लेकिन कितने व्यक्ति इस जीवन में पूर्णता प्राप्त करते हैं, यह ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। सद्गुरुदेव ने इस प्रवचन में शिष्य धर्म की पहचान तो स्पष्ट की ही है, साथ ही जीवन जीने की कला को अपने विशिष्ट भाव प्रवाह वाणी में स्पष्ट किया है।

उसी प्रवचन का सारांश–

यह श्लोक वशिष्ठोपनिषद से लिया गया है और उसमें गुरु और शिष्य का एक विशेष वर्णन आया है।

शिष्योर्वदातुं भव देव नित्यं, कविनत्व पूर्ण दुर्लभं शरीरं।
चित्रं मया पूर्ण मदीव नित्यं, विश्वो ही एकं विश्वेववनंजं।।

इस श्लोक में ऋषि वशिष्ठ ने कहा है, कि जीवन में कई लाख योनियां भटकने के बाद में यह मनुष्य शरीर मिलता है और आप सब मनुष्य हैं चाहे 5 वर्ष के हैं, चाहे 30 वर्ष के हैं, चाहे 500 वर्ष के हैं। उसमें पहले पंक्ति में कहा कि 'गुरु हमार जाति, गुरु हमार गोत्र।' बंगला में ट्रांसलेट किया गया है कि हमारी जाति अब कुछ नहीं रही, हमारा गोत्र भी कुछ नहीं रहा। गुरु ही हमारा नाम है, गुरु ही हमारी जाति है, गुरु ही हमारा गोत्र है, गोत्र का अर्थ-वंश परंपरा। क्योंकि 'जन्मानाम जायते शूद्र, संस्कारात द्विज उच्चयते।' मां-बाप ने जो जन्म दिया वह तो एक शूद्रवत जन्म दिया। शूद्र का मतलब कोई जाति विशेष से नहीं है जिसको मल का, मूत्र का, शुद्धता का, अशुद्धता का भान नहीं हो वह शूद्र है। और जिसको इस बात का ध्यान है कि शुद्धता हो, पवित्रता हो, दिव्यता हो, श्रेष्ठता हो, मन में करुणा हो, प्रेम हो वह ब्राह्मण है।

प्रत्येक व्यक्ति जब जन्म लेता है तो शूद्र के रूप में होता है, इसलिए कि उसको ज्ञान नहीं होता कि मैं टट्टी में पड़ा हुआ हूँ या पेशाब में खड़ा हुआ हूँ। मां उसको स्वच्छ करती है तो होता है, बाकि उसी हाथ से वह अपने किसी शरीर के अंग को जो टट्टी में भरा होता है लगा देता है। जो 4 महीने का, छह महिने का बालक होता है वही वापस मुंह में लगा लेता है और उसी पलंग पर जहाँ वह लेटा हुआ है वही पेशाब कर लेता है, मल कर लेता है और उसी पर खेलते रहता है।

उसको इस बात का ज्ञान नहीं होता कि मैं क्या हूँ और जब वह गुरु के पास में आता है, तब गुरु उसको एक नया संस्कार देते हैं। उसको यह समझाते हैं कि यह उचित है, यह अनुचित है और आज से तुम मेरी जाति के

हो, मेरे गोत्र के हो, मेरे नाम के हो, मेरे ही पुत्र हो। तो संस्कारात द्विज, द्विज का मतलब है, दूसरी बार जन्म लेने वाला। द्विज-ज=जन्म लेने वाला, तथा द्वि=दूसरी बार।

परिवार ने उसको एक बार जन्म दिया, वह तो मां बाप ने एक संयोगवश दे दिया, कोई प्लान नहीं था, कोई प्लानिंग नहीं थी उनकी, कोई मन में ऐसी भावना नहीं थी कि मुझे एक श्रेष्ठ पुत्र उत्पन्न करना है। वह तो एक मनोरंजन का क्षण था और मनोरंजन के क्षण में जो कुछ भी उत्पन्न हो गया, वह तो प्रकृति की एक लीला थी और कुछ व्यक्ति और अधिकांश व्यक्ति उसी प्रकार से जन्म लेकर समाप्त हो जाते हैं—चाहे वह हमारी मां हो, बाप हो, भाई हो, बहन हो, पड़ोसी हो या रिश्तेदार हो।

फिर जब संस्कार मिलता है, तो संस्कार के कारण वापिस से उसका जन्म होता है। और तब उसको भान होता है कि मेरे जीवन का लक्ष्य, मेरे जीवन का कर्तव्य क्या है, उद्देश्य क्या है, चिन्तन क्या है और मुझे किस जगह पहुंचना है क्योंकि जिस शरीर को हम सब कुछ समझ बैठते हैं जो भोग्य पदार्थ, जिन्हें हम सब कुछ अपने जीवन का ध्येय मान लेते हैं—चाहे पान खाना हो या मिठाई खानी हो या अन्य भोग पदार्थ। मिठाई इतनी स्वादिष्ट और इतनी महंगी है—250 रु.-350 रु. किलो, वह हम खाते हैं तो शाम तक मल बन जाता है, विष्ठा बनती है। सुबह हम उसको देखना भी नहीं चाहते, इतनी गन्दी और घृणित होती है। ये शरीर अपने आप में कोई सुगन्धमय नहीं बना क्योंकि हमने जो कुछ भी फल खाये, सेब खाए, अनार खाए, केले खाए या मिठाई खाई या रोटी खाई ये सब अपने आप में विष्ठा में परिणित हो जाते हैं। हमारा शरीर क्या कार्य करता है वह मैं आपको समझाता हूँ।

पशु भी हमसे अच्छे हैं गाय

घास खाकर भी दूध उत्पन्न कर लेती है, हम मिठाई खाकर भी विष्ठा उत्पन्न करते हैं। क्योंकि हमारा पूरा शरीर अपने आप में शूद्रमय है और यह शूद्रमय शरीर ब्राह्मणमय शरीर बने, वशिष्ठ कहते हैं, यही जीवन का उद्देश्य है, यही जीवन का धर्म, यही जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। यदि ऐसा नहीं है, तो शूद्र बन कर भी जीवन व्यतीत किया जाता है। उसको कोई रोकता नहीं है। उस जीवन में आनन्द नहीं है, उस जीवन में सुख नहीं है, उस जीवन में तृप्ति नहीं है और यदि आप उत्तम कोटि के वस्त्र पहन भी लेंगे तब भी चार महिने बाद फट कर के पोंछा बन जायेगा या बाहर फेंक देंगे।

इस शरीर को यदि आप चार-पांच दिन तक धोएंगे नहीं तो, यह शरीर दुर्गन्धमय बन जाएगा। आप चाहे कितना ही पाउडर, लिपिस्टिक, क्रीम लगाएं तब भी शरीर पर झुर्रियां पड़ेंगी ही।

इसी शरीर को भगवान का देवालय कहा है मंदिर कहा है। 'शरीरं शुद्धं रक्षेत देवालय देवापि च'। ये भगवान का मंदिर है। जहां भगवान का एक मंदिर हो, उसमें बाहर एक चार दीवारी होती है, चार दीवारी के अन्दर एक कमरा होता है, कमरे के अन्दर एक और कमरा, उसके अन्दर भगवान की मूर्ति का स्थापन किया जाता है, ठीक उसी प्रकार से अन्दर एक ईश्वर है और ईश्वर के बाहर एक शरीर है, शरीर हड्डियों का ढांचा है। फिर यह चमड़ी ऐसी है जैसे चार दीवारी हो, और चार दीवारी टूट जाती है तो भी पशु अन्दर घुस सकता है। इसलिए 'शरीरं शुद्धं रक्षेत' शरीर को शुद्ध और पवित्र बनाए रखना आवश्यक है, इसलिए आवश्यक है, कि हमें हर क्षण यह ध्यान रहे कि अन्दर मूल मंदिर में भगवान बैठे हुए हैं या जिनको हमने गुरु कहा है।

गुरु अपने आप में कोई मनुष्य नहीं है, यदि हम किसी

मनुष्य को गुरु मानते हैं तो वह हमारी न्यूनता है। एक क्षण ऐसा आता है, कि–

य: शिव स: गुरु प्रोक्त,
य: गुरु स: शिव: स्मृत:
तस्य भेदेन भावेन, स: याति नरकामगति।

यह शिव है वही गुरु है। यह गुरु है वही शिव हैं। शिव यानी कल्याण करने वाले, सत्यं शिवं सुन्दरम। जो हमारा कल्याण कर सकें। जो इसमें भेद मानता है, वह अधम है। गुरु और शिष्य में भेद रहता है, जब तक हम शूद्र रहते हैं तब तक भेद रहता है।

एक क्षण ऐसा आता है, जब साक्षात उस शिवत्व का, उस कल्याण रूप का दर्शन करने लग जाते हैं। जब दर्शन करने लग जाते हैं तब ब्राह्मण वृत्ति की ओर बढ़ने लग जाते हैं। तब इस बात का भान नहीं रहता कि हम घर में सूखी रोटी खा रहे हैं या घी चुपड़ा हुआ है या नहीं है, पूड़ी है या सब्जी है या मिठाई है या फल है क्योंकि वह तो सब अपने आप में एक ही चीज में कन्वर्ट होती है, रूपान्तर होती है। इसलिए वह भेद तो मिट जाता है। जो व्यक्ति उसी में लिप्त रहता है वह शूद्र ही बना रहता है। लेकिन जब उससे परे हट जाता है तब उसका चिंतन बदल जाता है कि जो कुछ मिल जाए वह प्रभु का प्रसाद है हमें उसको स्वीकार करना चाहिए। साधु तो केवल घास और हवा, वायु और जल इनका सेवन करके भी अपने आप में तेजस्वी बने रहे और हम उत्तम कोटि के भोज्य पदार्थ खाने के बाद भी 60 वर्ष की अवस्था में मर गये, क्योंकि हमारे हृदय में वह चिन्तन नहीं था और जिनके हृदय में चिन्तन आ

जाता है कि हमारा जीवन 'त्वदीयं वस्तु गोविन्द, तुभ्यमेवं समर्पयेत' ये आपकी दी हुई चीज है, क्योंकि आपने हमें पुनः जन्म दिया है, आपने हमें वापिस संस्कार सिखाया है।

और 'तुभ्य मेवं समर्पयेत' इसलिए आपको समर्पित है। आप जैसा चाहे मेरा उपयोग करें चाहे लेखन कार्य में मेरा उपयोग करे चाहे झाड़ू निकालने के कार्य में। यह आपकी इच्छा है। मेरी कोई भावना नहीं है, कि मैं झाड़ू निकालूं तो छोटा हो जाऊंगा या लिखूंगा तो बहुत बड़ा हो जाऊंगा।

यदि शिष्य के मन में यह भाव आता है कि यह कार्य छोटा है, यह कार्य मेरा नहीं है तो वह अभी शिष्य बनने की दिशा में अग्रसर नहीं हुआ है, वह सिर्फ फालोवर है। क्योंकि शिष्य का उद्देश्य एवं लक्ष्य यही होता है कि जो भी कार्य है मुझे करना है तब ऐसे शिष्य को गुरु के हाथ, गुरु के पैर, गुरु की आंख, गुरु का नेत्र, गुरु का मस्तिष्क कहा गया है। क्योंकि गुरु अपने आप में कोई साकार बिम्ब नहीं है, निराकार को एक मूर्ति का आकार दिया गया है। ये सारे शिष्य मिलकर के एक गुरुत्वमय बनता है, एक आकार बनता है।

क्योंकि हम विकारग्रस्त हैं, इसलिए हमारा ध्यान नहीं लगता, क्योंकि हमारा चित्त चंचल है, भटकता रहता है, तो शास्त्रों ने मूर्ति का आकार दिया कि यह शिव की मूर्ति है, यह लक्ष्मी की मूर्ति है, यह जगदम्बा की मूर्ति है। क्योंकि एकदम ध्यान लगता नहीं, तो उस जगदम्बा की मूर्ति को देखते हैं, कि अच्छा ऐसी जगदम्बा है। ऐसी जगदम्बा है यह प्रतीक मान कर ध्यान लग जाता है। ये सगुण रूप है, आगे जा करके व्यक्ति निर्गुण रूप में आ जाता है, उसके सामने मूर्ति, चित्र या बिम्ब कुछ होता ही नहीं केवल एक ज्योति होती है, उस ज्योति में वह गुरु के दर्शन करता रहता है। फिर ये सारे उपाय उपकरण अपने आप में व्यर्थ हो जाते हैं। फिर उसका भी अपने आप में शरीर के प्रति धन, मान, पद, प्रतिष्ठा के प्रति कोई गर्व या घमण्ड नहीं रहता। उस ज्योति में गुरु दर्शन होने के बाद वह यही चिंतन करता है कि उसका शरीर उसके काम आ जाए, वह

उसका उपयोग कर ले और ऐसे जीवन चिन्तन की प्रक्रिया, ऐसा जीवन का विचार और धारणा जब बनती है तब हम सही अर्थों में मनुष्य बनते हैं और यह धारणा बननी चाहिए, यह विचार आना चाहिए, कि बहुत कम समय है हमारे जीवन में और यदि कुछ समय भी हम अपने आप को भुलाकर गुरु को दे पाएं तो यह श्रेष्ठता है जीवन की।

स्वार्थ तो पशु करते हैं, कि यदि हम एक रोटी फेंक देते हैं तो एक कुत्ता रोटी उठाता है, दूसरा कुत्ता उस पर झपटता है। वहां स्वार्थ है। मनुष्य अपनी रोटी निकाल कर सामने वाले को दे देता है कि तुम भी खाओ। तुम अच्छी सब्जी खाओ मैं कम खा लेता हूँ। ऐसा भाव कि मैं जमीन पर सो रहा हूँ या पलंग पर सो रहा हूँ या मैं अच्छा खा रहा हूँ या बुरा खा रहा हूँ–ये अपने आप में महत्त्वपूर्ण नहीं है।

महत्त्व इतना है कि हमारा शरीर टूटे नहीं, बिखरे नहीं, खाएंगे नहीं तो शरीर बिखर जाएगा, भोजन नहीं करेंगे तो शरीर कमजोर हो जाएगा और कमजोर हो जाएगा तो चार दीवारी टूट जाएगी तो उस मंदिर में अन्दर कोई बदमाश, कोई घटिया आदमी, कोई पशु घुस जायेगा। इस चार दीवारी को सुरक्षित रखना, स्वस्थ रखना जरूरी है। इसकी ईंट कोई खिसके नहीं, यह शरीर कमजोर बने नहीं मगर शरीर को मजबूत बनाने के लिए उत्तम भोज्य पदार्थ आवश्यक नहीं है, अनिवार्य नहीं है। मिल
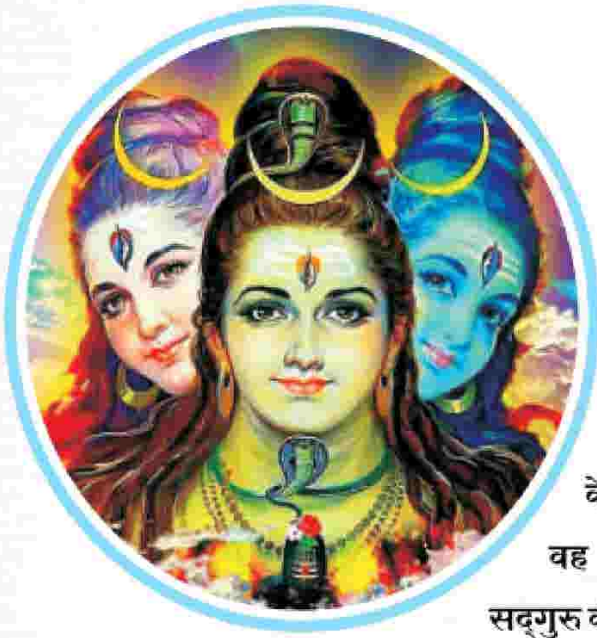
जाए तो ठीक, नहीं मिलें तो ठीक, पलंग मिला तो ठीक है नहीं मिले तो ठीक है। ऐसी जब मन में भावना आती है और जब यह धारणा बनती है, तो एक क्षण के बाद में समाधि की अवस्था आ जाती है। तब हम बैठते हैं तो हमारी आँखों के सामने गुरु का बिम्ब बिल्कुल साकार स्पष्ट हो जाता है, वह चाहे हजार मील दूर हों। ऐसी भावना पैदा होने पर ही सद्‌गुरु की प्रसन्नता प्राप्त हो सकती है।

उस वशिष्ठ उपनिषद में कहा है कि ऐसा तो शिष्य पैदा ही नहीं हुआ, हो ही नहीं सकता शिष्य नहीं कहला सकता। क्योंकि सबसे पहले तो एक व्यक्ति होता है, एक लड़का होता है, एक बालक होता है जो गुरु के पास आता है उससे मिलता है उससे सम्पर्कित होता है, जुड़ता है और आते ही उसने गुरु दीक्षा ले ली तो शिष्य नहीं बन गया। दीक्षा ली है, उसके बाद में वह जिज्ञासु बनता है। उसके मन में होता है कि यह गुरु है कि नहीं है, मतलब एक तर्क वितर्क पैदा होता रहता है, यह कैसा गुरु है, यह खुद भी कभी-कभी उदास हो जाते हैं, कभी-कभी रोने लग जाते हैं, गुरु तो रोता नहीं। ये कभी-कभी विचलित हो जाते हैं, हमें तो कहते हैं कि जमीन पर सोओ ये तो खुद पलंग पर लेटते हैं। तो यह गुरु कैसे हो गये? ये तो मेरे सामने केले खा रहे थे, तो क्या यह गुरु हैं भी कि नहीं। इनको हम गुरु मानें कि नहीं मानें, ये तर्क वितर्क पैदा होता है, तर्क वितर्क चलता रहता है, शिष्य नहीं वह जिज्ञासु कहलाता है। उसको जिज्ञासा होती है ये सही है, गलत है। उसे भोजन करने से क्या फायदा हो जाएगा, भोजन नहीं करें तो कौन सा मर जाएंगे। ये सब जिज्ञासा होती है, जिज्ञासा वृत्ति का मतलब है कि अभी तक हममें मनुष्यत्व आया नहीं है, शिष्यत्व तो आगे की बात है। अभी शिष्य वह बना नहीं, अभी जिज्ञासा है, तर्क वितर्क है, संदेह है, भ्रम है। और यह संदेह यह भ्रम आपके खून में मिला हुआ है, बाहर से खरीदकर नहीं लाए और जो आपको खून दिया है जिस मां बाप का खून है यह तर्क वितर्क से भरा है क्योंकि उनके मन में ऐसा विचार था, ऐसा चिन्तन था। उन्होंने कभी इस प्रकार का चिन्तन किया ही नहीं। उनके जीवन में ऐसा कोई गुरु

मिला ही नहीं, उनको कोई ऐसा रास्ता दिखाने वाला मिला ही नहीं, तो वह भ्रम, वह संदेह, वो न्यूनता हमें देते गये। उस परिवेश, उस वातावरण ने, उस खून ने तर्क वितर्क पैदा किया। इसलिए पहले मैंने कहा कि 'गुरु हमारी जाति है अब वह पुरानी जाति नहीं रही' गुरु हमारा गोत्र है हमारी वह वंश परंपरा भी नहीं रही।

इसलिए वशिष्ठ कहते हैं, कि तर्क वितर्क से अगली जो स्टेज है, वह शिष्यत्व की स्टेज है और तर्क वितर्क से अगली स्टेज शिष्यत्व की तब बनती है जब गुरु जो करता है वैसा नहीं करे जो गुरु कहे वैसा करे। दोनों में अंतर है। जो करे गुरु वैसा आप करेंगे तब गड़बड़ हो जाएगी। गुरु किसी से किस ढंग से बात करेंगे, किसी को प्रेम से बात करेंगे, किसी को डाटेंगे, किसी के पास बैठेंगे, किसी के पास नहीं बैठेंगे। कृष्ण गोपियों के पास बैठते थे तो हमारा भ्रम, तर्क वितर्क कहता है ये तो बिल्कुल कृष्ण है ही नहीं। ये तो बहरूपिया है।

वही उद्धव को उपदेश देते हैं तो ज्ञानी कहलाते हैं। वही व्यक्ति जब गीता का उपदेश देता है तो महाविद्वान कहलाता है। वही दुर्योधन पर प्रहार करता है तो एकदम शत्रुवत व्यवहार होता है और हमारा तर्क वितर्क चलता रहता है कि जैसे अर्जुन के मन में संदेह पैदा होता रहा कि ये ईश्वर हैं भी की नहीं हैं, ये गुरु हैं भी कि नहीं हैं। कृष्ण समझाते रहे कि तुम मूर्खता कर रहे हो, मैं ही तुम्हारा ईश्वर हूँ। मैं तुम्हारा गुरु हूँ। तुम मुझे सारथी समझ रहे हो, तुम

मुझे मित्र समझ रहे हो। मैं तुम्हारा मित्र नहीं हूँ, सारथी नहीं हूँ, मैं तो सम्पूर्ण ईश्वर हूँ। तो ये कोई घमण्ड नहीं कर रहा था। कृष्ण जब गीता में बता रहा था कि तुम यों नहीं समझो तो यों समझो कि इतने सैंकड़ों पेड़ हैं, उनमें मैं पीपल का पेड़ हूँ, क्योंकि वह पवित्र है, मुझे पीपल का पेड़ समझो। हजारो नदियां हैं तो यों समझो कि मैं गंगा नदी हूँ। तुम जिस तरीके से मुझे समझना चाहो समझ लो, समझ लोगे तो ये भ्रम तुम्हारा मिट जाएगा। जब भ्रम मिट जाएगा तो मुझमें तुम एकाकार हो जाओगे।

इसलिए मैं जो करता हूँ वह तुम मत देखो, उसका अनुसरण तुम मत करो। जो मैं कहूं उसका तुम अनुसरण करो, मैं तुम्हें कहूं युद्ध के लिए तैयार हो जा, खड़ा हो जा तो उस समय खड़ा हो जा। कोई जरूरी नहीं कि मैं तीर उठाऊंगा तुम तीर उठाओ। मैं एकदम जब तीर फेंकूं तो तुम तीर फेंको। तुम केवल मेरी आज्ञा पालन करो। तुम मेरा अनुसरण मत करो, जो मैं करता हूँ, उसी ढंग से मत करो। इसलिए जब ऐसी स्थिति आ जाती है कि गुरु ने कहा और हमने किया, वही शिष्यत्व है। उस समय एक क्षण भी विलम्ब होता है तो समझना चाहिए शिष्यत्व में न्यूनता है।

गुरु कोई ऐसा आदेश देता भी नहीं, जो अपने स्वार्थ के लिए हो, गुरु कोई ऐसा आदेश न दे जो अपने प्रयोजन के लिए हो। शिष्य सोचे इस समय गुरु को क्या जरूरत है और इसलिए तीसरे पंक्ति में वशिष्ठ ने कहा है कि सैकड़ों मील, हजारों मील दूर बैठे हुए भी यदि गुरु के पैर में कांटा चुभता है और यहां दर्द होता है तो समझिये हम शिष्य हुए, यही कसौटी है। जब दूर बैठा हुआ व्यक्ति उदास है तो एकदम से उदासी छा जाती है कि कुछ अच्छा नहीं लगता घर में बैठे हुए भी, तब एहसास होता है कि कोई समस्या तो नहीं है, घर में तो सब ठीक है। पति बैठे हैं, पत्नी बैठी है, बच्चे खेल रहे हैं, अच्छा भोजन सामने रखा है फिर भी उदासी छाई हुई है और जब ऐसी उदासी छाये, तो समझ लेना चाहिए कि जरूर मेरे साथ वहां से जुड़े हुए मेरे गुरु उदास है। जरूर कोई तनाव है उनको, जरूर कोई

परेशानी है। इसलिए कहते हैं, उनको कांटा चुभे और दर्द हमें हो।

ऐसा शिष्य हुआ भी क्या कि गुरु रात को तड़पता रहे और शिष्य को नींद आ जाए, उसे शिष्य कह नहीं सकते। ऐसे कैसे हुआ कि गुरु रात में बीमार, बुखार से तड़पता रहे और तुम्हें नींद आती रही, तो तुम जुड़े नहीं, तुममें शिष्यत्व नहीं आया। क्योंकि अलग तो हो ही नहीं सकता। एक ही जाति, एक ही गोत्र, एक ही प्राण, एक ही चेतना, एक ही धड़कन। ऐसा तो हो ही नहीं सकता, पैर में कांटा चुभे और तकलीफ नहीं हो। कांटा यहां चुभेगा तो यहाँ तकलीफ होगी ही होगी। हृदय में तकलीफ होगी, वेदना होगी, इसलिए गुरु और शिष्य का एक ही शरीर होता है, दो तो दिखाई देते हैं परंतु दो शरीर एक प्राण होता है, उन दोनों शरीर को मिला करके जो चीज बनती है उसको गुरु कहा गया है।

चौथी पंक्ति में कहा गया है कि जब जिज्ञासु वृत्ति समाप्त हो जाती है, तर्क वितर्क समाप्त हो जाते हैं, संदेह भ्रम समाप्त हो जाते हैं तब तीसरी अवस्था उसकी शिष्यत्व की बनती है और शिष्य बनता है तो यह स्टेज आती है कि वे कहीं पर भी हों तब भी हर क्षण मेरे पास में हैं। चलता हूँ, उठता हूँ, बैठता हूँ, बात करता हूँ, तो बिल्कुल मेरे पास ही विचरण कर रहे हैं। मैं खाता हूँ तो वही खाना खिला रहे हैं, खा रहे हैं। वह ही पास में बैठे हैं। उनको तकलीफ है तो पहले मुझे तकलीफ है। उनको आंच आ रही है तो मैं जल रहा हूँ, धूप में खड़े हैं तो मेरा सिर दर्द हो रहा है, क्योंकि उनका शरीर बना रहेगा तो और ज्ञान फैलेगा। यदि उनका शरीर जल्दी समाप्त हो जाएगा, तो ज्ञान वहां समाप्त हो जायेगा। इसलिए वह ज्ञान और ज्यादा फैले इसलिए उसके शरीर की रक्षा करना भी शिष्य का धर्म है। अगर वह तनाव में रहेगा तो कुछ कर नहीं पायेगा, लिख नहीं पायेगा, कुछ ज्ञान चेतना नहीं दे पायेगा। इसलिए उसके मस्तिष्क को जीवित रखना भी एक

शिष्य का धर्म है, इसीलिए शिष्य को आंख कहा गया है, हाथ कहा गया है, पांव कहा गया है। वह सब मिलकर के फिर जब नई स्थिति बनती है तब वह अपने आप चौथी अवस्था में, पूर्ण परम हंस अवस्था में आ जाता है, गुरुत्वमय अवस्था में आ जाता है, पूर्ण एकाकार हो जाता है, पूर्ण लीन हो जाता है और जैसा कहा गया है, कबीर ने कहा है कि

फूटा कुंभ जल, जल ही समाना।
यह तथ्य कहा ग्यानी।।

एक घड़े में पानी है, एक नदी में भी पानी है और नदी के अंदर वह घड़ा है। इस संसार में आप हैं, एक गुरु के हृदय में आप हैं मगर उस पानी और उस पानी में डिफ्रेन्स है, अन्तर है, क्योंकि वह घड़े के अन्दर बन्द है। वह पड़ा-पड़ा पानी सड़ जायेगा।

आज नहीं सड़ेगा घड़े का पानी तो पांच दिन के बाद में कीटाणु पड़ जायेंगे। ज्योंहि वह घड़ा फूटा जल-जल ही समाना, वह जल उस जल में मिल जाएगा, वह नदी बन जाएगा। जो आपके ऊपर संदेह का आवरण, जो घड़ा है, जो जल मिलता नहीं, मिलने की हिम्मत नहीं कर पा रहा है, मिला नहीं पा रहा है, वह घड़ा जब फूटेगा तभी एकाकार हो पाएगा। जब आपका मोह, आपकी माया, आपका भ्रम, आपका संदेह, आपका अप्रेम फूटेगा तभी, जल जल ही समाना, आपका शरीर, आपके प्राण उनके प्राणों से जुड़ जायेंगे तो यही तथ्य कहा ग्यानी इसलिए यही ज्ञान है, यही चेतना है।

यह ज्ञान जब हमारी चेतना में व्याप्त हो, तब इस शरीर से अपने आप में सुगन्ध-व्याप्त हो जाती है। फिर शरीर से बदबू नहीं आती इस शरीर में दुर्गन्ध नहीं आती। फिर कृष्ण के शरीर से जैसे अष्ट गन्ध निकलती है वैसे उस व्यक्ति के शरीर से भी अष्ट गन्ध निकलने लग जाती है और उस खुमारी में वह मस्त रहता है। अपने काम में लगा रहता है। एक अजीब-सी खुमारी है और वह खुमारी तभी आ

पायेगी, जब उसके अन्दर एक क्रिया बनेगी, जब उसके अन्दर एक ज्योति प्रकाशित होगी। अपने आप में गुरु के जागरण की स्थिति बनेगी। अपने आप में चेतना पैदा होगी और ऐसी चेतना पैदा होने पर ही वह अपने आप में चौथी अवस्था में आकर के गुरुत्वमय बनता है।

शिष्य आगे बढ़कर गुरु के साथ एकाकार हो जाता है। दीक्षा देते ही नहीं हो जाता। चौथी अवस्था में जा करके गुरुत्वमय बनता है। वशिष्ठ कह रहे हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को यह चिन्तन करना चाहिए कि मैं कहाँ पर खड़ा हूँ। पहली क्लास में खड़ा हूँ या दसवीं की परीक्षा दे रहा हूँ या एम.ए. का एग्जाम दे रहा हूँ, कहाँ हूँ। उम्र का इसमें कोई बन्धन है नहीं। पांच साल के प्रहलाद को ज्ञान हो गया था और साठ साल के हिरण्यकश्यपु को ज्ञान हुआ ही नहीं था। अस्सी साल के कंस को भी ज्ञान नहीं हुआ था। तो वो चेतना तब व्याप्त होती है, जब कोई सूखी लकड़ी किसी चन्दन से घिसती है, घिसने पर वह सूखी लकड़ी जो खैर की लकड़ी होती है उसमें भी सुगन्ध व्याप्त हो जाती है।

जब आप गुरु के प्राण से, गुरु के आत्म से, अपने आपको, एकाकार होने की प्रक्रिया करेंगे तो, आपमें भी सुगन्ध व्याप्त होगी ही होगी। जब सुगन्ध व्याप्त होगी, तो ऐसी खुमारी आयेगी, एक मस्ती आयेगी। फिर काम करते हुए थकेंगे नहीं आप। फिर आपको यह लगेगा कि मेरा शरीर, मेरा समय नष्ट हो रहा है, मैं और क्या काम करूँ, कैसे करूँ, कैसे बढ़ाऊँ इस चेतना को इस ज्ञान को कैसे फैलाऊँ, कैसे उसको उपयोग में लाऊँ। आपको दिन के चौबीस घण्टों में हर क्षण ऐसा लगेगा कि मैं कितना अधिक से अधिक कार्य कर सकूं। आपका आलस्य अपने आप तिरोहित हो जाएगा तब आप समझे कि आप शिष्यता की ओर बढ़ रहे हैं। इससे मैंने पहले भी कहा, कि गुरु यदि स्वार्थी है तो गुरु भ्रष्ट है। गुरु लालची है तो भी भ्रष्ट है। गुरु की भी कसौटी है। ये शिष्य का कर्तव्य है कि अगर गुरु थके हुए हैं तो उनके पांव दबाएं, मेरी ड्यूटी है कि मैं पानी पिलाऊँ, मेरी ड्यूटी है कि मैं छाया करूँ, मेरी

ड्यूटी है कि मैं उनके दु:ख-दर्द को समझूँ। अपने ऊपर लूँ। और मैं धीरे-धीरे उनके सुख-दुख में एक सहयोगी बन सकूँ। विश्वासपात्र बन सकूँ। मेरे ऊपर वह निश्चिंत हो सकें और ज्यों-ज्यों आपका क्रोध और आपका अहंकार गलता जाएगा, त्यों-त्यों आप उसमें एकाकार होते जाएंगे। यह क्रिया कठिन तो है पर यह क्रिया आसान भी है।

आसान इसलिए है कि जिस क्षण आप पहला कदम आगे बढ़ा देंगे, तो दूसरा कदम और बढ़ जाएगा। दूसरा, तीसरा, आठवां, दसवां और एक दिन उस मंजिल तक पहुंच जाएंगे। मगर समय बहुत कम है उसमें बीस साल का गेप पच्चीस साल का गेप, पन्द्रह साल का गेप नहीं रख सकते। जितना जल्दी उस मंजिल को पार कर लेंगे, वही हमारे जीवन की एक गति होगी, सुगति होगी, उन्नति होगी, उच्चता होगी, श्रेष्ठता होगी, पूर्णता होगी।

मैं आपको ऐसा आशीर्वाद दे रहा हूँ कि आप एक सामान्य व्यक्ति से आगे बढ करके जिज्ञासु, जिज्ञासु से आगे बढ़ करके शिष्य, शिष्य से आगे बढ़ करके आत्मीय बन जाएं, एकाकार हो जाएं और मेरे हृदय में, मेरी आँखों में, आपको देखने के बाद प्रसन्नता की एक चमक आए और आप भी मुझे देखें तो हर्ष से नाचने लग जाएं झूमने लग जाएं। ऐसी स्थिति आपकी बने, मैं ऐसा ही आपको हृदय से आशीर्वाद देता हूँ, कल्याण कामना करता हूँ।

पूज्यपाद सदगुरुदेव डॉ. नारायणदत्त श्रीमालीजी
(परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी)

'नारायण मंत्र साधना विज्ञान' पत्रिका आपके परिवार का अभिन्न अंग है। इसके साधनात्मक सत्य को समाज के सभी स्तरों में समान रूप से स्वीकार किया गया है, क्योंकि इसमें प्रत्येक वर्ग की समस्याओं का हल सरल और सहज रूप में संग्रहित है।

काल भैरव भगवान शिव का ही एक स्वरूप है। भगवान भैरव की पूजा प्रत्येक साधना में करने का विधान है, क्योंकि ये हर प्रकार से साधक की रक्षा करते हैं। साधना काल में कई प्रकार के विघ्न उपस्थित होते हैं, इसीलिए साधकों द्वारा भैरव ध्यान, साधना का एक आवश्यक अंग माना जाता है। काल भैरव अपने साधक की प्रत्येक प्रकार की तंत्र बाधा इतर योनियों, भूतों-प्रेत आदि योनियों से पहुँचाए जा रहे आघातों से रक्षा करते हैं। कार्यालय द्वारा तंत्र बाधा से रक्षा हेतु विशेष प्राण प्रतिष्ठित 'काल भैरव यंत्र' निर्मित कराए गए हैं, जिनके मात्र स्थापन से ही घर में यदि कोई तंत्र बाधा है, अथवा यह बाधा किसी व्यक्ति को पीड़ित करती है, तो वह बाधा हट जाती है।

काल भैरव यंत्र

यंत्र स्थापन विधान

किसी भी दिन प्रात: दक्षिण दिशा की ओर मुंह कर बैठ जायं। सामने बाजोट पर काला कपड़ा बिछा कर स्टील की थाली में कुंकुम से 'ॐ भं भैरवाय नम:' लिखकर उस पर काल भैरव यंत्र स्थापित करें। फिर लाल आसन पर बैठकर फूल, दीप से पूजन कर 108 बार निम्न मंत्र का उच्चारण करें-

।। ॐ भं भैरवाय नम: ।।

इसे 7 दिन तक करें फिर इसे उसी काले कपड़े में बांधकर घर के किसी कोने में अथवा खूंटी, दरवाजे पर लटका दें। इससे घर में तंत्र बाधा व्याप्त नहीं होती।

405/-

नारायण मंत्र साधना विज्ञान

मासिक पत्रिका का वार्षिक मेम्बरशिप ऑफर

यह दुर्लभ उपहार तो आप पत्रिका का वार्षिक सदस्य अपने किसी मित्र, रिश्तेदार या स्वजन को भी बनाकर प्राप्त कर सकते हैं। यदि आप पत्रिका-सदस्य नहीं हैं, तो आप स्वयं भी सदस्य बनकर यह उपहार प्राप्त कर सकते हैं।

वार्षिक सदस्यता शुल्क - 405/- + 45/- डाक खर्च = 450/- Annual Subscription 405/- + 45/- postage = 450/-

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें : नारायण मंत्र साधना विज्ञान

गुरुधाम, डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी, जोधपुर-342001 (राज.)

फोन : 0291-2433623, 2432010, 7960039

किसी भी बुधवार को

कनकधारा यंत्र साधना

भारत के तांत्रिक सम्राट त्रिजटा अघोरी ने स्पष्ट शब्दों में बताया है, कि

यदि हमारे सभी तंत्र-मंत्र के ग्रंथ नष्ट हो जायें, पर केवल कनकधारा यंत्र व उसकी रहस्य विधि बची रह जाए, तब भी हम धनी हैं, विश्व में सर्वोपरि हैं, संसार में सर्वश्रेष्ठ हैं।

हिमालय स्थित **'सिद्धाश्रम'** के मंत्र स्वरूप ऋषि **'कात्यायन जी'** ने भी इस बात की पुष्टि की थी, कि कनकधारा यंत्र महत्वपूर्ण है तथा व्यापार वृद्धि एवं दारिद्र्य नाश में अद्भुत प्रभावशाली है, उन्होंने ही मुझे इस यंत्र का स्वरूप व विधि समझाई थी।

'कनकधारा' यंत्र का स्वरूप

कनकधारा यंत्र पंच त्रिकोणों से निर्मित है, यंत्र के चारों तरफ तीन परिधि खींची जाती है, जो कि तीन शक्तियों – महाकाली (शत्रु संहार कर्त्री), महालक्ष्मी (धन-धान्य प्रदान कर्त्री) तथा महासरस्वती (यश-सम्मान प्रदान कर्त्री की प्रतीक है। इसके पश्चात् गोल घेरा त्रिभुवन सुन्दरी का प्रतीक है। तत्पश्चात् सोलह कमल दल हैं, जो कि कुबेर सहचर के प्रतीक हैं, जिनके नाम हैं –

1. धन, 2. धान्य, 3. पृथ्वी, 4. भवन, 5. कीर्ति, 6. आयु, 7. यश, 8. सम्पदा, 9. वाहन, 10. स्त्री, 11. सन्तान, 12. राज्य सम्मान, 13. स्वास्थ्य, 14. प्रफुल्लता, 15. भोग तथा 16. मोक्ष।

इसके बाद सोलह कमल दलों के भीतर अष्टदल का निर्माण होता है जो कि अष्ट सिद्धियों का प्रतीक है, जिनके नाम –

1. अणिमा, 2. महिमा, 3. लघिमा, 4. प्राप्ति, 5. प्राकाम्य, 6. ईशिता, 7. वशिता तथा 8. ख्याति है। इसके पूजन से जीवन में किसी भी प्रकार का कोई अभाव नहीं रहता।

इस अष्टदल के भीतर का त्रिकोण दारिद्र्य धनदा लक्ष्मी का प्रतीक है, इसके भीतर का त्रिकोण भुवनेश्वरी लक्ष्मी का परिचायक है तथा त्रिकोण के मध्य का बिन्दु भगवती का सूचक है, जो कि समस्त अनिष्टों का नाश करने वाली तथा जीवन में प्रफुल्लता बढ़ाने वाली है। साधक को इस बिन्दु पर स्वर्ण सिंहासनारूढ़ भगवती लक्ष्मी की कल्पना करनी चाहिए।

इस प्रकार से यह यंत्र समस्त प्रकार की धनदायक शक्तियों का परिचायक एवं सूचक है तथा इस यंत्र की पूजा इन सारी शक्तियों की समग्र पूजा है।

कनकधारा यंत्र धातु निर्मित होता है तथा यंत्र का निर्माण अत्यन्त पेचिदा एवं सूक्ष्म है। **'कनकधारा यंत्र रहस्य'** हस्तलिखित प्रति के अनुसार इसे कूर्मपृष्ठीय बनाना चाहिए तथा धातु निर्मित हो, इसके साथ ही संजीवनी काल में ही इस यंत्र का निर्माण हो, क्योंकि अशुद्ध एवं अप्रामाणिक यंत्र लाभ के बजाय हानि दे सकता है।

घर के अतिरिक्त दुकान, कारखाना, फैक्ट्री, व्यवसाय स्थल पर भी इस यंत्र को स्थापित किया जा सकता है। **'यंत्र राज'** ग्रंथ के अनुसार इस यंत्र को घर में स्थापित करने से अटूट लक्ष्मी प्राप्त होती है तथा लक्ष्मी का चिरकाल तक वास रहता है।

यंत्र तभी फलदायक हो सकता है, जब वह मंत्रसिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त हो, इस यंत्र पर संजीवनी सम्पुट युक्त प्राणप्रतिष्ठा होनी चाहिए। अपने घर में किसी भी बुधवार को इस यंत्र को स्थापित किया जा सकता है। गृहस्थ

व्यक्तियों को यदि शुद्ध मन्त्रोच्चार एवं प्राणप्रतिष्ठा का ज्ञान न हो, तो उन्हें चाहिए, कि वे किसी योग्य विद्वान से प्राणप्रतिष्ठा युक्त मंत्र सिद्ध **कनकधारा यंत्र** ही लें।

कनकधारा विनियोग

ॐ अस्य श्री कनकधारा यंत्र मन्त्रस्य, श्री आचार्य श्री शंकर भगवत्पाद ऋषिः श्री भुवनेश्वरी ऐश्वर्यदात्री महालक्ष्मी देवता, श्रीं बीजम्, ह्रीं शक्ति श्री विद्याः रजोगुण रसना ज्ञानेन्द्रियं भोग रसः, वाक् कर्मेन्द्रियं, मध्यमं स्वरं, द्रव्य तत्वं, विद्या कला, ऐं कीलनं, ब्रू उत्कीलनं प्रवाहिनी सचय मुद्रा, मम क्षेमस्थैर्यायुरारोग्याभि वृद्ध्यर्थं श्री महालक्ष्मी अष्ट लक्ष्मी भगवती दारिद्र्य विनाशक धनदा लक्ष्मी प्रसाद सिद्ध्यर्थं च नमोयुत वाग् बीजं स्व बीजं लोम विलोम पुटितोक्त त्रिभुवन भूतिकरी प्रसीद महाम् माला मंत्र जपे विनियोगः।

कनकधारा ध्यान

सरसिज निलये सरोज हस्ते,
धवल तमांशुक गन्ध माल्य शोभे।
भगवति हरि वल्लभे मनोज्ञे;
त्रिभुवन भूति करि प्रसीद मह्यम्।।

कनकधारा मंत्र

।। ॐ वं श्रीं वं ऐं ह्रीं क्लीं कनकधारायै स्वाहा।।

कनकधारा यंत्र एवं कनकधारा स्तोत्र का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। साधक को चाहिए, कि किसी भी बुधवार को उत्तर दिशा की ओर मुँह कर बैठ जाएं और सामने बाजोट पर पीला वस्त्र बिछाकर चावलों की ढेरी पर **कनकधारा यंत्र** स्थापित करें और फिर उपरोक्त विनियोग एवं ध्यान के बाद उस पर कुंकुम से पाचं बिन्दी लगायें, फूल चढ़ायें, दूध से बने प्रसाद का भोग लगाये और घी का दीपक लगाकर उपरोक्त मंत्र का **लक्ष्मी माला** से पांच माला मंत्र जप करें। फिर आरती कर प्रसाद वितरण करें।

विद्वानों के अनुसार '**श्रीयंत्र**' एवं '**कनकधारा यंत्र**' का अद्‌भुत सामंजस्य है, जिसके पास श्री यंत्र है, उसके लिए तो यह वरदान स्वरूप है, श्रीयंत्र के साथ ही कनकधारा यंत्र भी स्थापित करें, इसके समान सामंजस्य विश्व में दुर्लभ है।

साधना सामग्री- 450/-

कनकधारा स्तोत्र

अंगं हरे पुलकभूषणमाश्रयन्ती, भृंगांगनेव मुकुलाभरणं तमालम्।
अंगीकृताखिलविभूतिरपांगलीला, मांगल्यदास्तु मम मंगलदेवताया:।।1।।

मुग्धा मुहुर्विदधती वदने मुरारेः, प्रेमत्रपाप्रणिहितानि गतागतानि।
माला दृशोर्मधुकरीय महोत्पले या, सा में श्रियं दिशतु सागरसम्भवाया:।।2।।

विश्वामरेन्द्रपदविभ्रमदानदक्ष, मानन्दहेतुरधिकं मधुविद्विषो पि।
ईषन्निषीदतु मयि क्षणमीक्षणार्द्ध, मिन्दीवरोदरसहोदरमिन्दिराया:।।3।।

आमीलिताक्षमधिगम्य मुदा मुकुन्द, मानन्दकन्दमनिमेषमनंगतन्त्रम्।
आकेकरस्थितिकनीकिमपक्ष्म नेत्रं, भूत्यै भवेन्मम भुजंगशयांगनाया:।।4।।

बाह्यन्तरे मधुजित: श्रितकौस्तुभे या, हारावलीव हरिनीलमयी विभाति।
कामप्रदा भगवतोपि कटाक्ष माला, कल्याणमावहतु मे कमलालयाया:।।5।।

कनकधारा यंत्र साधक की उन्नति, यश, वैभव, कीर्ति, धन-सम्पदा जैसी अनवरत समस्याओं को समृद्ध शास्त्रोक्त समाधान है

कालाम्बुदालितलिसोरसि कैटभारे, र्धाराधरे स्फुरति या तु तडंग दन्यै।
मातु: समस्तजगतां महनीयमूर्ति, र्भद्राणि मे दिशतु भार्गवनन्दनाया:।।6।।
प्राप्तं पदं प्रथमत: किल यत्प्रभावान, मांगल्यभाजि मधुमाथिनी मन्मथेन।
मय्यापतेत्तदिह मन्थम मीक्षणार्द्धं, मन्दालसं च मकरालयकन्यकाया:।।7।।
दद्याद् दयानुपवनो द्रविणाम्बुधारा, मस्मिन्न वि किंचनविहंगशिशौ विषाणे।
दुष्कर्मधर्ममपनीय चिराय दूरं, नारायणप्रणयिनीनयनाम्बुवाह:।।8।।
इष्टा विशिष्टमतयोपि यया दयार्द्र, दृष्टया त्रिविष्टपपदं सुलभं लभंते।
दृष्टि: प्रहृष्टकमलोदरदीप्तिरिष्टां, पुष्टि कृषीष्ट मम पुष्करविष्टराया:।।9।।
गीर्तेवतेति गरुडध्वजभामिनीति, शाकम्भरीति शशिशेखरवल्लभेति।
सृष्टिस्थितिप्रलयकेलिषुं संस्थितायै, तस्यै नमस्त्रिभुवनैकगुरोस्तरुण्यै।।10।।
श्रुत्यै नमोस्तु शुभकर्मफलप्रसूत्यै, रत्यै नमोस्तु रमणीयगुणार्णवायै।
शक्त्यै नमोस्तु शतपत्रनिकेतनायै, पुष्टयै नमोस्तु पुरुषोत्तमवल्लभायै।।11।।
नमोस्तु नालीकनिभाननायै, नमोस्तु दुग्धोदधिजन्म भूत्यै।
नमोस्तु सोमामृतसोदरायै, नमोस्तु नारायणवल्लभायै।।12।।
सम्पत्कराणि सकलेन्द्रियनन्दनानि, साम्राज्यदान विभवानि सरोरुहाक्षि।
त्वद्वन्द्वनानि दुरिताहरणोद्यतानि, मामेव मातरनिशं कलयन्तु नान्यम्।।13।।
यत्कटाक्षसमुपासनाविधि:, सेवकस्य सकलार्थ सम्पद:।
संतनोति वचनांगमान, सैस्त्वां मुरारिहृदयेश्वरींभजे।।14।।
सरसिजनिलये सरोजहस्ते, धवलतमांशुकगन्धमाल्य शोभै।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे, त्रिभुवनभूतिकरि प्रसीद मह्यम्।।15।।
दिग्धस्तिभि: कनककुम्भमुखावसृष्ट, स्ववार्हिनीमलचारुजलप्लुतांगम्।
प्रातर्नमामि जगतां जननीमशेष, लोकाधिनाथगृहिणीममृताब्धिपुत्रीम्।।16।।
कमले कमलाक्षवल्लभे त्वं, करुणापूरतरंगितैरपाड्यै।
अवलोकय मामकिंचनानां, प्रथमं पात्रमकृत्रिमं दयाया:।।17।।

जैसे भ्रमरी अधखिले कुसुमों से अलंकृत तमाल-तरु का आश्रय लेती है, उसी प्रकार जो श्री हरि के रोमांच से सुशोभित श्रीअङ्गों पर निरन्तर पड़ता रहता है तथा जिसमें सम्पूर्ण ऐश्वर्य का निवास है, सम्पूर्ण मङ्गलों की अधिष्ठात्री देवी भगवती महालक्ष्मी का वह कटाक्ष मेरे लिए मङ्गलदायी हो।।1।।

जैसे भ्रमरी महान् कमल दल पर मँडराती रहती है, उसी प्रकार जो मुर-शत्रु श्री हरि के मुखारविन्द की ओर बारंबार प्रेमपूर्वक जाती, और लज्जा के कारण लौट आती है, समुद्र कन्या लक्ष्मी की वह मनोहर मुग्ध दृष्टिमाला मुझे धन-सम्पत्ति प्रदान करे।।2।।

जो सम्पूर्ण देवताओं के अधिपति इन्द्र के पद का वैभव-विलास देने में समर्थ है, मधुहन्ता श्री हरि को भी अधिकाधिक आनन्द प्रदान करने वाली है, तथा जो नील-कमल के भीतरी भाग के समान मनोहर जान पड़ती है, उन लक्ष्मी जी के अधखुले नेत्रों की दृष्टि क्षण भर के लिए मुझ पर भी थोड़ी-सी अवश्य पड़े।।3।।

प्रसिद्ध मंत्र शास्त्री 'हरिपाद ब्रह्मचारी' ने 'कनकधारा यंत्र रहस्य' शीर्षक ग्रंथ की रचना की है, जो हस्तलिखित दुर्लभ प्रति है, जिसके अन्त में निष्कर्ष स्वरूप उन्होंने लिखा है – हमारे भारतवर्ष में कनकधारा यंत्र जैसी अद्‌भुत वस्तु मौजूद है, फिर भी हम गरीब हैं, यह आश्चर्य नहीं तो और क्या है ?

शेषशायी भगवान् विष्णु की धर्म पत्नी श्री लक्ष्मी जी का नेत्र हमें ऐश्वर्य प्रदान करने वाला हो, जिसकी पुतली तथा बरौनियां अनङ्ग के वशीभूत (प्रेमपरवश) हो अध खुले, किन्तु साथ ही निर्निमेष नयनों से देखने वाले आनन्दकन्द श्री मुकुन्द को अपने निकट पाकर कुछ तिरछी हो जाती हैं।।4।।

जो भगवान मधुसूदन के कौस्तुभमणि–मण्डित वक्ष:स्थल में इन्द्रनीलमयी हारावली–सी सुशोभित होती है, तथा उनके भी मन में काम (प्रेम) का संचार करने वाली है, वह कमल–कुंजवासिनी के कमला की कटाक्ष माला मेरा कल्याण करे।।5।।

जैसे मेघों की घटा में बिजली चमकती है, उसी प्रकार जो कैटभशत्रु श्री विष्णु के काली मेघमाला के समान श्याम सुन्दर वक्ष: स्थल पर प्रकाशित होती है, जिन्होंने अपने आविर्भाव से भृगुवंश को आनन्दित किया है तथा जो समस्त लोकों की जननी है, उन भगवती लक्ष्मी की पूजनीया मूर्ति मुझे कल्याण प्रदान करे।।6।।

समुद्र–कन्या कमला की वह मन्द, अलस, मन्थर और अर्धोन्मीलित दृष्टि, जिसके प्रभाव से कामदेव ने मङ्गलमय भगवान् मधुसूदन के हृदय में प्रथम बार स्थान प्राप्त किया था, यहाँ मुझ पर पड़े।।7।।

भगवान नारायण की प्रेयसी लक्ष्मी का नेत्ररूपी मेघ दयारूपी अनुकूल पवन से प्रेरित हो दुष्कर्म (धनागम विरोधी अशुभ प्रारब्ध) रूपी धाम को चिरकाल के लिये दूर हटाकर विषादरूपी धर्मजन्यताप से पीड़ित मुझ दीनरूपी चातक पर धनरूपी जलधारा की वृष्टि करे।।8।।

विशिष्ट बुद्धि वाले मनुष्य जिनके प्रीतिपात्र होकर जिस दयादृष्टि के प्रभाव से स्वर्ग पद को सहज ही प्राप्त कर लेते हैं, पद्मासना पद्मा की वह विकसित कमल गर्भ के समान कान्तिमयी दृष्टि मुझे मनोवाञ्छित पुष्टि प्रदान करे।।9।।

जो सृष्टिलीला के समय वाग्देवता (ब्रह्म–शक्ति) के रूप में स्थित होती है, तथा प्रलय–लीला के काल में शाकम्भरी (भगवती दुर्गा) अथवा चन्द्रशेखरवल्लभा पार्वती (रुद्र–शक्ति) के रूप में अवस्थित होती है, त्रिभुवन के एकमात्र पिता भगवान नारायण की उन नित्य यौवना प्रेयसी श्री लक्ष्मी जी को नमस्कार है।।10।।

मात:! शुभकर्मों का फल देने वाली श्रुति के रूप में आपको प्रणाम है। रमणीय गुणों की सिन्धुरूपा रति के रूप में आपको नमस्कार है। कमल वन में निवास करने वाली शक्तिस्वरूपा लक्ष्मी को नमस्कार है, तथा पुष्टिरूपा पुरुषोत्तम प्रिया को नमस्कार है।11।।

कमलवदना को नमस्कार है। क्षीरसिन्धुसम्भूता श्री देवी को नमस्कार है। चन्द्रमा और सुधा की सगी बहन को नमस्कार है। भगवान नारायण की वल्लभा को नमस्कार है।।12।।

कमल सदृश नेत्रों वाली माननीय माँ! आपके चरणों में किये गये प्रणाम सम्पत्ति प्रदान करने वाले, सम्पूर्ण इन्द्रियों को आनन्द देने वाले, साम्राज्य देने में समर्थ और सारे पापों को हर लेने के लिए सर्वथा उद्यत हैं, वे सदा मुझे ही अवलम्बन करें (मुझे ही आपकी चरण–वन्दना का शुभ अवसर सदा प्राप्त होता रहे)।।13।।

जिनके कृपा कटाक्ष के लिए की गई उपासना उपासक के लिए सम्पूर्ण मनोरथों और सम्पत्तियों का विस्तार करती हैं, श्री हरि की हृदयेश्वरी उन्हीं आप लक्ष्मी देवी का मैं वन, वाणी और शरीर से भजन करता हूँ।।14।।

भगवति हरिप्रिये! तुम कमल वन में निवास करने वाली हो, तुम्हारे हाथों में नीला–कमल सुशोभित है। अत्यन्त उज्वल वस्त्र, गन्ध और माला आदि से शोभा पा रही हो। तुम्हारी झाँकी बड़ी मनोरम है, त्रिभुवन का ऐश्वर्य प्रदान करने वाली देवि! मुझ पर प्रसन्न हो जाओ।।15।।

दिग्गजों द्वारा सुवर्ण–कलश के मुख से गिराये गये आकाशगङ्गा के निर्मल एवं मनोहर जल से जिनके श्री अङ्गों का अभिषेक (स्नान–कार्य) होता है, सम्पूर्ण लोकों के अधीश्वर भगवान विष्णु की गृहिणी और क्षीरसागर की पुत्री उन जगज्जननी लक्ष्मी को मैं प्रात:काल प्रणाम करता हूँ।।16।।

कमल–नयन केशव की कमनीय कामिनी कमले! मैं अकिंचन (दीन–हीन) मनुष्यों में अग्रगण्य हूँ, अतएव तुम्हारी कृपा का स्वाभाविक पात्र हूँ। तुम उमड़ती हुई करुणा की बाढ़ की तरल–तरङ्गों के समान कटाक्षों द्वारा मेरी ओर देखो।।17।।

जो लोग इन स्तुतियों द्वारा प्रतिदिन वेद–त्रयीस्वरूपा त्रिभुवन–जननी, भगवती लक्ष्मी की स्तुति करते हैं, वे इस भूतल पर महान् गुणवान् और अत्यन्त सौभाग्यशाली होते हैं, तथा विद्वान् पुरुष भी उनके मनोभाव को जानने के लिए उत्सुक रहते हैं।।18।।

आर्थिक समृद्धि और व्यापार में सफलता हेतु साधक को नित्य प्रति उपरोक्त स्तोत्र का एक पाठ अवश्य करना चाहिए
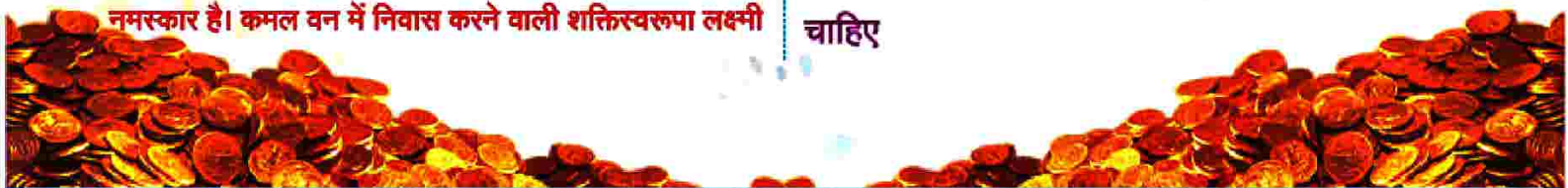
साधनात्मक शब्दार्थ

अक्सर यह देखा गया है, कि लोग आम बोल-चाल की भाषा में कुछ शब्दों का प्रयोग तो करते हैं, परन्तु उसका सही अर्थ उन्हें ज्ञात नहीं होता है। यही बात साधनात्मक क्रिया-विधियों से सम्बन्धित अनेकानेक शब्दों के साथ लागू होती है। यदि कोई जिज्ञासावश आपसे पूछ ले, कि 'अंगन्यास' क्या होता है, तो आपके पास स्पष्ट रूप में एक सरल परिभाषा होनी चाहिए, जिससे उस शब्द विशेष का अर्थ स्पष्ट हो सके। साधना क्षेत्र के परिप्रेक्ष्य में साधनात्मक शब्दार्थ एक प्रयास है, आशा है साधकों एवं पाठकों को इससे अवश्य लाभ होगा।

- **न्यास**–यह एक विशेष साधनात्मक क्रिया है, जिसमें साधक अपनी उंगलियों व्दारा शरीर के विभिन्न स्थानों का विशेष मंत्रों का उच्चारण करते हुए स्पर्श व्दारा शुद्धिकरण एवं दैविक ऊर्जा का स्थापन करता है। न्यास को सम्पन्न करने से साधक शरीर व मन में शक्ति का संचार होता है। शनैः शनैः इन न्यासों के माध्यम से साधक में देव भावों का प्रादुर्भाव होता है। 'देवो भूत्वा यजेद् देवं' अर्थात् देवता बनकर ही उपासना या साधना की जाती है। **'न्यास' का अर्थ है–'नि'+'अस्' अर्थात् क्षेपण करना और स्थापित करना।** चित्त के अशुद्ध भावों को समाप्त करके देवत्व को स्थापित करना न्यास का मुख्य उद्देश्य है, जिससे साधना में सफलता सम्भव हो सके। न्यास कई प्रकार के होते हैं।

- **हृदयादिन्यास**–हृदय, शिर, शिखा, कवच, नेत्र तथा अस्त्र–ये छः अंग हैं, जिसमें इस न्यास के माध्यम से इष्ट मंत्रों के बीज का स्थापन किया जाता है–

  हृदयं च शिरोदेवि शिखां च कवचं ततः
  नेत्रमस्त्रं न्यसेदन्तं नमः स्वाहा क्रमेण तु
  षडङ्गोऽयं मातृकायाः सर्वपाप हरः स्मृतः।।

  इस न्यास के माध्यम से साधक अपने शरीर को अनात्म पदार्थ से दूर करते हुए देवतामय बनाने का उपक्रम रहता है।

- **ऋष्यादिन्यास**–मंत्र साधना से पूर्व इस न्यास का प्रावधान है, इस न्यास के माध्यम से मंत्र साधना में साधना के प्रणेता ऋषि, उपास्य देवता और सम्बन्धित छन्द से तादात्म्य स्थापित किया जाता है।

  ऋषिच्छन्दो देवतानां विन्यासेन बिना जपेत्
  साधितः सर्वभावेन तुच्छं नित्यं फलं भवेत्।

  ऋषि, छन्द और देवता के नयास किये बिना उनकी चेतना प्राप्त नहीं होती है और मंत्र जप निष्फल हो जाता है। इस क्रिया में विशेष मंत्रों का उच्चारण करते हुए दाहिने हाथ की उंगलियों व्दारा शरीर के निर्दिष्ट अंगों का स्पर्श किया जाता है।

- **रक्षा विधान**–वायुमण्डल एवं अन्तरिक्ष में अनेक आत्माएं अशरीरी रूप में विचरण करती हैं, वह शुभ भी होती हैं और अशुभ भी। जो दुष्ट आत्माएं हैं, उनका प्रयास रहता है कि साधनारत साधकों को दूषित किया जाए या उनकी साधनाओं को छिन्न-भिन्न किया जाए, जिससे वह साधना सङ्कल न हो सके। ऐसी आत्माओं से सुरक्षित रहने के लिए तथा साधनों में सम्भावी विघ्नों का निराकरण करने के लिए विशेष मंत्रात्मक क्रियाएँ की जाती हैं, जिसे रक्षा विधान कहा जाता है।

  विशेष रूप से साबर साधनाओं या घोर श्मशान साधनाओं में रक्षा विधान करना ही चाहिए, अनयथा शारीरिक क्षति या मानसिक विक्षिप्तता हो जाती है।

प्रेम......! एक ऐसा शब्द

जिसे सुन बस कदम ही
नहीं सारा मन ही
ठिठक कर रुक जाता है,
लेकिन क्या होती है
प्रेम की वह अदा
जिसे देख मन खिल उठे ?
यही बताने तो आ रहा है
'योगिनी एकादशी'
का पर्व,

यौवन व सौन्दर्य की किसी सजीव
साकार मूर्ति के साथ,
इस साधना के माध्यम से....

योगिनी साधना

अपनत्व का भाव पत्नी के रूप में अधिक स्पष्टता से सामने आता है, प्रेमिका के रूप में वही भाव इस रूप में किंचित परिवर्तित हो जाता है, कि वह अपने प्रिय को सभी रूपों में केवल श्रेष्ठ ही नहीं श्रेष्ठतम देखना चाहती है, क्योंकि सामाजिक शिष्टाचार के अन्तर्गत एक प्रेमिका से अधिक पत्नी को अपनी मनोभावनाएं प्रकट करने की छूट होती है।

यूं तो नारी का प्रत्येक स्वरूप मधुर होता है, प्रत्येक स्वरूप की जीवन में एक निश्चित अर्थवत्ता व महत्त्वपूर्ण स्थान होता है – चाहे वह मां का स्वरूप हो, बहन का हो या वह पुत्री के रूप में हो। चाहे पत्नी हो अथवा प्रेमिका या मित्र के रूप में ही क्यों न हो।

स्वरूपों में भिन्नता हो सकती है, किन्तु गहन दृष्टि से देखें, तो प्रत्येक स्वरूप ममत्व की किसी अन्तःसलिला का प्रवाह लेकर ही गतिशील होता है, आप्लावित कर देने की चेष्टा में ही निमग्न होता है, क्योंकि ऐसा करना प्रत्येक स्त्री का मूल धर्म होता है, लेकिन इन सभी स्वरूपों से कुछ पृथक, जो स्वरूप विशिष्ट ही नहीं विशिष्टतम होता है, उसी एक स्वरूप का नाम है – योगिनी।

योगिनी एक नारी देह में आबद्ध होते हुए, नारी मन की समस्त कोमल भावनाओं को एकत्र कर, उपस्थित होते हुए भी अन्ततोगत्वा शक्ति का एक पुंज ही होती है, जो नारी देह का आश्रय लेकर सम्मुख आती है, क्योंकि शक्ति का आश्रय स्थल सदैव से ही नारी को स्वीकार किया गया है।

केवल साधक ही नहीं, प्रत्येक सामान्य मनुष्य के जीवन में भावनाएं होती हैं, जो उसे सहज प्रवाह दे सकती हैं। जीवन से यदि भावनाओं को ही निकाल दिया जाए, तो मनुष्य व यंत्र में अंतर ही क्या रह जाएगा? किन्तु मनुष्य यंत्र नहीं हो सकता।

पहले ही इस युग की 'सभ्यता' ने मनुष्य को एक यंत्र बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है, जिसके परिणाम की अधिक व्याख्या या वर्णन की आवश्यकता नहीं है।

जो सम्मुख है, वह है – 'एक यंत्रवत् जीवन'। जिसमें न किसी के प्रति कोई ममत्व है, न अपनत्व, न उछाह, न वेग, न प्रेम और न ही फिर इन भावनाओं के अभाव में जीवन के प्रति कोई लक्ष्य ही।

किसी भी व्यक्ति से पूछ कर देखिए, कि उसके जीवन में जो आपाधापी चल रही है या जिस आपाधापी का न केवल उसने सृजन कर लिया है वरन् जिसका वह निरन्तर पोषण भी करता जा रहा है, उसका अर्थ क्या है? क्यों वह सदैव इतना उद्विग्न बना रहता है? इसके मूल्य पर उसे क्या प्राप्त हो जाएगा? किसी के पास भी इसका निश्चित उत्तर नहीं होगा, क्योंकि इन बातों का कोई निश्चित उत्तर हो ही नहीं सकता। 'भावनाएं' जो जीवन की सर्वोच्च उपलब्धि हो सकती हैं, जब उसी का अभाव हो गया, उसी का हनन् करके कुछ निर्मित करने की चेष्टा की, तो भूल तो वहीं से प्रारम्भ हो गयी।

और इसी बिन्दु पर आकर योगिनी साधना का महत्व स्वयमेव स्पष्ट हो जाता है, क्योंकि योगिनी साधना का अर्थ ही है – भावनाओं की साधना, अपनत्व व ममत्व की साधना, जीवन में जो कुछ विस्मृत हो चला हो, जो कुछ टूट गया हो या जो कुछ रिक्त रह गया हो, उन सभी को अर्जित कर लेने या पुनः प्राप्त कर लेने की साधना।

यह तो भावनाओं का ही बल होता है, कि जीवन में कोई भी व्यक्ति वह सब कुछ कर जाता है, जो अन्यथा उसके सहज बल से सम्भव नहीं था और यहां यह ध्यान रखने की बात है, कि बल का तात्पर्य शारीरिक बल से नहीं होता है।

यह तो मानसिक बल होता है, जो एक नर को पुरुष बनने की ओर तथा पुरुष को पुरुषोत्तम बनने की ओर उत्प्रेरित करता है और इसके मूल में होती हैं ये भावनाएं, जिनके मूल में होता है प्रेम!

जो अपनत्व का भाव पत्नी के रूप में अधिक स्पष्टता से सामने आता है, प्रेमिका के रूप में वही भाव इस रूप में किंचित परिवर्तित हो जाता है, कि वह अपने प्रिय को सभी रूपों में केवल श्रेष्ठ ही नहीं श्रेष्ठतम देखना चाहती है, क्योंकि सामाजिक शिष्टाचार के अन्तर्गत एक प्रेमिका से अधिक पत्नी को अपनी मनोभावनाएं प्रकट करने की छूट होती है।

अंतर केवल सामाजिक बंधनों का ही होता है, अन्तर्मन का नहीं, और यही जीवन में सर्वाधिक संतोष और संतोष से भी कहीं अधिक एक अनोखी सी तृप्ति का कारण बन जाता है।

....कोई मेरे लिए भी चिंतायुक्त बना रहता है, कोई कहे–अनकहे रूप में मुझ पर अपना प्रेम बरसाता ही रहता है, कोई मेरे बारे में भी सोचता रहता है और सबसे बड़ी बात तो यह है, कि कोई मेरे सारे अस्तित्व पर अपना अधिकार मानता है....

ये तो जीवन की बड़ी अनोखी सी आश्वस्तियां होती हैं – जिनके ताने–बारे में बुना जीवन ही सही रूप में गतिशील होता हुआ पूर्णता की ओर अग्रसर हो सकता है।

....क्योंकि ऐसी आश्वस्ति मिल जाने का अर्थ होता है, एक प्रकार का सुरक्षा बोध मिल जाना और भावनाओं के आधार पर मिली आश्वस्ति ही वास्तविक सुरक्षा बोध दे सकती है अन्यथा व्यक्ति इसी को प्राप्त करने की चेष्टा में पता नहीं कहां–कहां भटक आता है।

जीवन एक निरपेक्ष घटना नहीं होती है। प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी भी पद, प्रतिष्ठा अथवा आर्थिक स्थिति का क्यों न हो, अपने जीवन का ताना–बाना किसी व्यक्ति या और अधिक विशद रूप में

खिलता हुआ गोरा रंग, भरा-भरा सा पुष्ट मांसल बदन, अंडाकार चेहरा, खंजन पक्षी की भांति नयन और उन नयनों की एक-एक चपलता में झिलमिलाते प्रेम के कई-कई संदेश-योगिनी तो स्वंय में एक उपमा है, उसकी उपमा दें भी, तो किससे दें ?

कहें, तो किसी भावना से जोड़ कर ही बुनना चाहता है। सामान्यतः व्यक्ति अपने जीवन को या अपनी अस्मिता को अपने परिवार से जोड़ कर जीवित रखना चाहता है। इसमें कोई अनुचित बात भी नहीं है।

परिवार जैसी सामाजिक संस्था के निर्माण के पीछे उद्देश्य ही यही रहा है, किन्तु निरन्तर बढ़ते हुए आर्थिक एवं अन्यान्य दबावों के बाद क्या आज यह सम्भव रह गया है, कि व्यक्ति अपनी जिम्मेदारियों से कुछ अलग हट कर, अपने जीवन को आह्लाद व मधुरता देने वाले क्षणों के विषय में चिंतन तक कर सके ?

जीवन में ऐसी स्थिति आ जाने पर जिस प्रवाह की आवश्यकता होती है वह किसी गणित की अपेक्षा केवल साधनाओं से ही उपलब्ध हो सकती है, क्योंकि प्रत्येक साधना स्वयं में शक्ति का एक-एक अजस्र प्रवाह ही तो होती है।

-और यही तथ्य योगिनी साधना के विषय में भी पूर्णतः सत्य है।

आज समाज में योगिनी शब्द को लेकर क्या धारणा है, इसको कदाचित विस्तार से बताने की आवश्यकता नहीं। अनेक व्यक्तियों की दृष्टि में भैरवी व योगिनी के मध्य भी कोई भेद नहीं होता। यूं भैरवी की प्रस्तुति ही कहां प्रासंगिक रूप में सम्भव हो पायी है?

किन्तु योगिनी इतना हल्का शब्द नहीं होता। योगिनी स्वयं मे शक्ति तत्व की एक विशिष्ट प्रस्तुति व स्वरूप होती है, जिसकी साधना सम्पन्न करना प्राण तत्व को सचेतन करने का एक उपाय होता है।

यह सत्य है, कि योगिनी की प्रस्तुति एक प्रेमिका रूप में होती है। किन्तु यह आवश्यक नहीं, कि प्रेमिका शब्द से सदैव वासनात्मक अर्थ ही अभिप्रेत हो। क्या प्रेमिका शब्द से एक महिला मित्र काअर्थ अभिप्रेत नहीं हो सकता है?

वस्तुतः योगिनी का वर्णन 'प्रेमिका' रूप में होने के पीछे जो कारण है, वह मात्र इतना ही है, कि भारतीय समाज की मान्यताओं में महिला मित्र की कभी कोई अवधारणा ही नहीं रही, लेकिन जो भावगत तात्पर्य है वह सदैव से यही रहा है।

साथ ही प्रेमिका का तात्पर्य होता है, एक ऐसी स्त्री, जो अपने प्रिय पर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देने में ही अपना सुख मानती हो और न केवल विलक्षण सौन्दर्य के रूप में वरन् इस रूप में भी योगिनी की समकक्षता कोई भी स्त्री करने में असमर्थ ही होगी।

जीवन को भावनाओं के आधार पर पुनः निर्मित करने व योगिनी के रूप में एक वास्तविक प्रेमिका प्राप्त करने के इच्छुक साधकों के हेतु, इस वर्ष दिनांक 05.07.21 को घटित होने वाली 'योगिनी एकादशी' के अवसर पर एक विशिष्ट साधना प्रस्तुत की जा रही है, जिसे सम्पन्न कर वे अपने भावनाशून्य हो रहे जीवन में हास्य, विनोद व मधुरता जैसे कुछ नये पृष्ठ जोड़ पाने में समर्थ हो सकते हैं।

इस साधना में प्रवृत होने वाले साधकों के लिए आवश्यक है, कि वे ताम्रपत्र पर अंकित **'योगिनी यंत्र'** व **'सफेद हकीक माला'** को साधनात्मक उपकरण के रूप में प्राप्त कर लें।

यह साधना उपरोक्त दिवस (योगिनी एकादशी) के अतिरिक्त किसी भी शुक्रवार को सम्पन्न की जा सकती है।

साधना में वस्त्र आदि का रंग श्वेत होना चाहिए तथा दिशा उत्तर मुख होनी चाहिए। इस साधना में किसी विशेष विधि-विधान की आवश्यकता नहीं है। यंत्र व माला का सामान्य पूजन करने के पश्चात् दत्तचित्त भाव से निम्न मंत्र की ग्यारह माला मंत्र जप सम्पन्न करें -

मंत्र

॥ ॐ ह्रीं योगिनि आगच्छ आगच्छ स्वाहा॥

यह एक दिवसीय साधना है तथा साधना सम्पन्न करनेके दूसरे दिन यंत्र व माला को किसी निर्जन स्थान पर विसर्जित कर देना चाहिए।

जैसा कि प्रारम्भ में कहा, योगिनी शक्ति तत्व का ही एक विशिष्ट प्रस्तुतिकरण होती है, अतः यह स्वाभाविक ही है, कि इसे मनोयोग पूर्वक सम्पन्न करने वाले साधक को, जीवन के प्रत्येक पक्ष में अनुकूलता मिलने की क्रिया स्वयमेव प्रारम्भ हो जाए, चाहे वह धन सम्बन्धी पक्ष हो, स्वास्थ्य की समस्या हो, सौन्दर्य प्राप्ति की कामना हो या गृहस्थ जीवन के किसी भी पक्ष को स्पर्श करता कोई भी पक्ष क्यों न हो।

प्रस्तुत साधना की एक अन्य गुह्य विशेषता यह भी है, कि यह प्रबल पौरूष प्राप्ति की साधना भी है। साधना सम्पन्न करने के उपरान्त अपने अनुभवों को गोपनीय ही रखें।

साधना सामग्री - 450/-

जीवन की अनेक समस्याएं होती हैं, अनेक बाधाएं होती हैं,

चाहे वह प्रेम–प्रसंग का विषय हो अथवा ऋण से मुक्ति का, जिनका स्पष्ट रुप से उल्लेख भी नहीं किया जा सकता और जिनका समाधान प्राप्त करना भी आवश्यक होता है।

......और ऐसी ही स्थितियों में बन जाती है सहायक ऐसी कोई विशिष्ट साधना जो त्वरित फलप्रद हो....।

स्वप्नेश्वरी साधना इसी त्वरित फलप्रद श्रेणी की साधना है।

अवास्तविक सा प्रतीत होने के उपरांत भी सामान्य नहीं होता है स्वप्न का जगत। स्वप्न का जगत ही तो होता है वह क्षेत्र, जहां स्वयं मनुष्य अपने अन्तर्मन का परिचय प्राप्त कर सकता है।

उस अन्तर्मन का जिसे वह जाग्रत अवस्था में अन्यथा विविध सामाजिक मर्यादाओं नियमों आदि के कारण मृत सा कर देता है। इसी कारणवश मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि में मनुष्य के बाह्य परिचय से भी अधिक महत्वपूर्ण होता है वह 'परिचय' जिसे वे व्यक्ति के स्वप्नों के वर्णन के माध्यम से प्राप्त करते हैं।

और इसी कारणवश साधना के क्षेत्र में भी स्वप्न जगत को, उसकी सूक्ष्मता को, समझ को, अत्यंत महत्व दिया गया है तथा रचित किए गए हैं वे विधान जिनसे कोई भी साधक अपने अन्तर्मन में प्रविष्ट होकर जीवन की अनेक गुत्थियों का समुचित समाधान प्राप्त कर सके।

यही इस प्रस्तुत साधना का महत्व और एक प्रकार से कहें, तो इस युग की महती आवश्यकता भी है।

यह साधना प्रत्येक मानव के लिए आवश्यक है, जो साधक ऊंचे स्तर की साधना नहीं कर पाते या जिन्हें इतना अवकाश नहीं मिलता, उन्हें स्वप्नेश्वरी साधना सम्पन्न करनी चाहिए, जिससे कि वे जीवन में स्वयं का तथा दूसरे लोगों का कल्याण कर सकें।

साधना विधान

इस साधना के लिए मंत्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त **स्वप्नेश्वरी यंत्र तथा स्वप्नेश्वरी देवी का चित्र** आवश्यक है। यह यंत्र तांबे के पतरे पर बना हुआ हो।

साधना प्रारम्भ करने से पूर्व चावल, कुंकुम या केशर, जल का लोटा, दीपक, अगरबत्ती पहले से ही तैयार करके रख देनी चाहिए। यह साधना सोमवार से प्रारम्भ की जाती है। यह मात्र पांच दिन की साधना है। इसमें नित्य 101 मालाएं फेरनी आवश्यक है, इस साधना में **हकीक माला** का ही प्रयोग किया जाता है, अन्य मालाएं वर्जित है। यह साधना दिन को या रात्रि को भी की जा सकती है। साधक चाहे तो पचास मालाएं दिन को तथा इक्यावन मालाएं रात्रि को भी कर सकता है। इस प्रकार दिन और रात में दो बार में पूर्ण मंत्र जप हो जाना चाहिए।

सोमवार को साधक स्नान कर धोती पहन कर उत्तर की ओर मुंह कर बैठ जायें, सामने लकड़ी के बाजोट पर पीला रेशमी वस्त्र बिछा दें और उस पर **स्वप्नेश्वरी देवी का यंत्र** व **स्वप्नेश्वरी देवी का चित्र** स्थापित कर दें, इसके बाद अलग बर्तन में स्वप्नेश्वरी देवी के यंत्र को जल से, फिर कच्चे दूध से तथा फिर जल से धोकर, पोंछकर बाजोट पर रखें, किसी पात्र में यंत्र को स्थापित कर दें, यह पात्र ताम्बे का, स्टील या चांदी का हो सकता है, फिर कुंकुम या केशर से तिलक करें, सामने अगरबत्ती व दीपक लगावें, दूध का बना प्रसाद चढ़ायें और फिर एकनिष्ठता से ध्यान करें–

ध्यान

स्वप्नेश्वरी नमस्तुभ्यं फलाय वरदाय च।
मम सिद्धिमसिद्धिं वा स्वप्ने सर्व प्रदर्शयः।।

फिर नीचे लिखे मंत्र की एक सौ एक मालाएं नित्य जपें–

मंत्र

।। ॐ क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं स्वप्नेश्वरी ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं ॐ।।

OM KREEM KREEM KREEM HREEM HREEM SWAPNESHWARI HREEM HREEM KREEM KREEM KREEM OM

इस प्रकार नित्य एक सौ एक माला मंत्र जप करें, इन पांच दिनों में साधक जमीन पर सोयें, एक समय भोजन करें।

पांच दिन तक मंत्र जप के बाद छठे दिन इसी मंत्र की मात्र शुद्ध घृत से एक हजार एक आहुतियां दें, फिर पांच कुमारी कन्याओं को भोजन करायें और उन्हें यथोचित वस्त्र दान आदि देकर सन्तुष्ट करें, इस प्रकार करने पर साधना सम्पन्न मानी जाती है।

प्रयोग

जब भी कोई समस्या आपके सामने हो और उसका हल नहीं मिल रहा हो, तो इस प्रकार मंत्र जप किया हुआ साधक उस समस्या को कागज पर लिख ले और रात्रि को सिरहाने रख कर सो जाय, रात्रि को स्वप्नेश्वरी देवी स्वप्न में ही उस समस्या का हल स्पष्ट रूप से बता देती है, जिससे कि साधक को निर्णय करने में आसानी होती है।

साधक चाहे तो किसी भी व्यक्ति की समस्या इसी प्रकार से हल कर सकता है, उदाहरण के लिए व्यक्ति का प्रमोशन कब होगा या मैं अमुक व्यक्ति के साथ लेन-देन कर रहा हूं, यह ठीक रहेगा या नहीं, ऐसे प्रश्न स्पष्ट रूप से कागज पर लिख लेने चाहिए और अपने सिरहाने रात्रि को सोते समय रख लेने चाहिये, तत्पश्चात् स्वप्नेश्वरी देवी को मन ही मन प्रणाम कर सो जाना चाहिए, ऐसा करने पर उसे रात्रि को ही स्वप्न में उसका प्रामाणिक हल मिल जाता है।

वस्तुतः यह महत्वपूर्ण साधना है, और साधक इसके माध्यम से साधक हजारों लोगों का कल्याण कर सकता है।

साधना सामग्री- 450/-

मूलाधार से सहस्रार तक

मानव दो प्रकार से संचालित होते हैं, एक तो उसका अन्नमय कोष है जिसमें खाना, पीना, रहना, उठना, बैठना, सोना, सन्तान उत्पन्न करना और जीवन के क्रिया कलापों में व्यस्त रहना है और दूसरा प्राणमय कोष है जिसके माध्यम से ब्रह्माण्ड की परम ज्योति में अपने आपको लीन करना होता है।
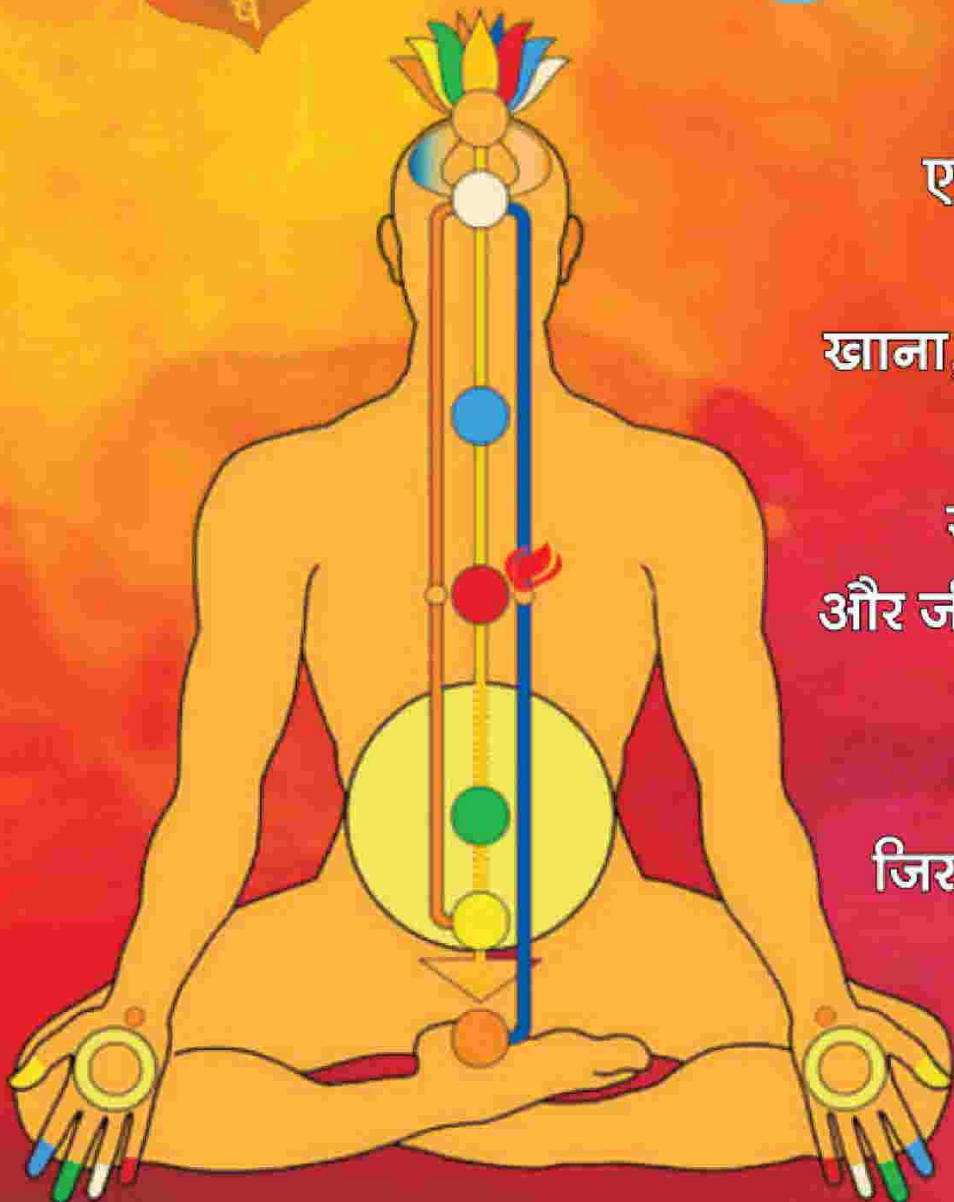
प्राणों में व्याप्त 'धन विद्युत' का जब देह की 'ऋण विद्युत' के साथ मानसिक शक्ति के द्वारा सम्मिश्रण होता है तब उससे जो दिव्य प्रकाश उत्पन्न होकर आन्तरिक अनुभूतियां कराता है उसे ही कुण्डलिनी कहा गया है,

साधना विधि

मन को संतुलित एवं एकाग्र बनाने के लिए व्यक्ति को चाहिए कि वह श्रद्धा और उत्साह से निरन्तर अभ्यासरत रहे, नित्य के अभ्यासयुक्त आसन से शान्ति के साथ एकान्त में बैठ कर मन के संकल्प-विकल्प को दूर करे, थोड़े समय के लिए भी जब मन निश्चल हो जाय तब 'उन्मनी मुद्रा' द्वारा नेत्र बंद कर भ्रकुटी के बीच में ध्यान करे, और अपने मन को एकाग्र कर अपनी कल्पना से भ्रकुटी के मध्य में प्रकाश को देखने का प्रयत्न करे, मानो कि आप इस स्थान को अन्दर आंखें खोल कर देख रहे हैं, परन्तु इतना ध्यान रखें कि इस समय मन में या मस्तिष्क में किसी प्रकार का विचार न आने दें 2-4 मिनट के लिए ही सही, आप सहज भाव से अन्दर देखते रहें, शान्त चित्त से बैठे रहें, और कुछ समय तक इसी क्रम से ध्यान करते रहने के बाद आपके संकल्प बल से भ्रूमध्य में अवश्य ही प्रकाश उत्पन्न होने लगेगा प्रारम्भ में भले ही यह धुंधला सा और छोटा सा हो परन्तु धीरे-धीरे अभ्यास के बाद **यह प्रकाश का रूप दीप-शिखा, टिमटिमाता जुगनू, धूप, बल्ब आदि जैसा दिखाई देने लगेगा।**

जैसा प्रकाश दिखाई दे उसे वैसे ही स्थिर रखने का प्रयत्न करें।

ज्यों ज्यों स्थिरता आती जायेगी यह प्रकाश अधिक से अधिक स्वच्छ होता जायगा, इस ज्योति को 'दिव्य नेत्र' या 'सूक्ष्म चक्षु' कहते हैं, यह ज्योति अन्दर सदा ही विद्यमान रहती है परन्तु साधारण मनुष्यों को यह नहीं दिखाई पड़ती।

इसी दिव्य नेत्र के द्वारा आप ध्यानस्थ होकर संसार में कहीं पर भी कुछ भी घटित होने वाले कार्य या घटना को देख सकते हैं।

इसको प्राप्त करने के लिए शरीर में
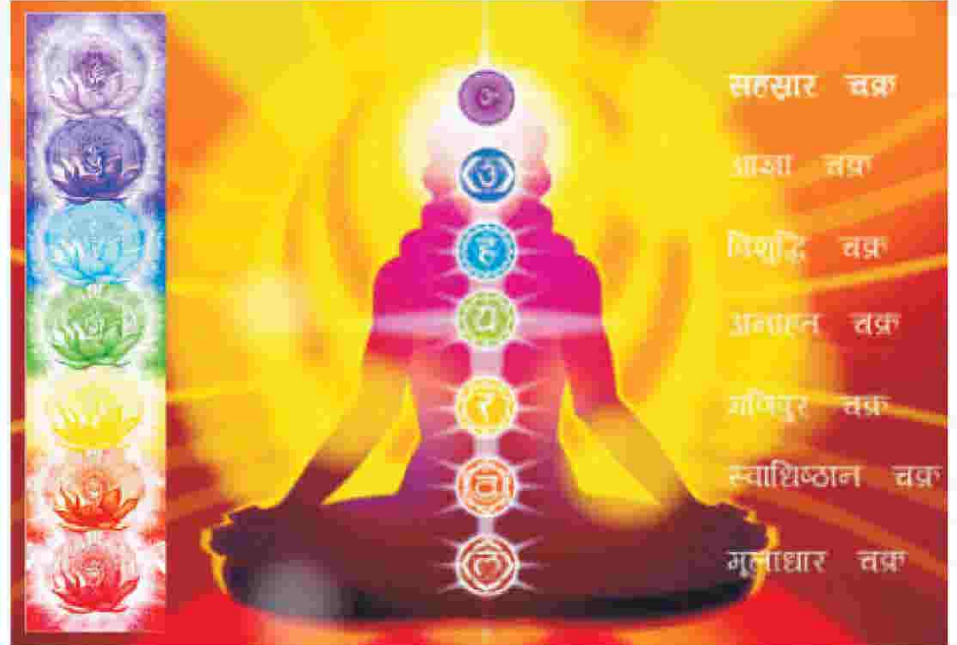
स्थित मर्मस्थलों के बारे में जानकारी आवश्यक है, इन मर्मस्थलों को चक्र भी कहा जाता है, प्रत्येक चक्र का 'मूल' तथा 'शक्ति केन्द्र' उस सुषुम्ना में है जो कि मानव को दिव्य नेत्र देने में सहायक है, ये चक्र ज्ञान वाहक तथा गति वाहक सूत्रों से बनी नाड़ियों से हैं और इसी के माध्यम से व्यक्ति अन्नमय कोष से प्राणमय कोष में प्रवेश कर सकता है।

कुण्डलिनी

हमारे प्राणों में व्याप्त धन विद्युत का जब देह की 'ऋण विद्युत' के साथ मानसिक शक्ति के द्वारा सम्मिश्रण होता है तब उससे जो दिव्य प्रकाश उत्पन्न होकर आन्तरिक अनुभूतियां कराता है उसे ही कुण्डलिनी कहा गया है, यह निर्विवाद है कि यह एक अपूर्व दिव्य ज्योति है जिसकी सहायता से देह के आंतरिक रहस्य और विश्व बाह्य स्थूल रहस्यों को प्रत्यक्ष रूप से देखा जा सकता है ।

कई बार ऐसा भी होता है कि ध्यानस्थ दशा में साधकों को इन चक्रों पर प्रकाश नहीं मिलता, केवल कुछ समय के लिए गति या प्राणों की सरसराहट सी ही अनुभव होती है, इसका कारण यह है कि जब मानव के पाप पुंज इन चक्रों पर छा जाते हैं तो इनका प्रकाश कुछ मन्द सा हो जाता है, बाद में पुनः अभ्यास या गुरुकृपा से यह धूम्र हट जाता है, और पुनः उसे इन चक्रों पर प्रकाश दिखाई देने लग जाता है।

कुण्डलिनी जागरण के रूप

कुण्डलिनी जागरण के प्रारम्भ में आन्तरिक प्रकाश प्रकट नहीं होता किन्तु प्राण अपना कार्य इन चक्रों में प्रारम्भ कर देता है, अर्थात **मूलाधार में स्थित अपान-प्राण ध्यान की ठोकर खाकर यहां की नाड़ियों को मथित करके मूलाधार से ले कर सुषुम्ना तक चींटियों के रेंगने जैसी गति या कम्पन करता है या कभी-कभी गर्म जल के बहने जैसी क्रिया उत्पन्न हो जाती है,** कभी यह स्पर्श अत्यन्त शीतल होता है जिससे सारा देह रोमांचित हो जाता है तो कभी प्राण की इस वेगवती अवस्था में साधकों के हाथ पैर बड़े वेग के साथ उठते बैठते हैं, झटके लगते हैं और कोई-कोई साधक तो

अपने आसन से उछल कर दूर जा गिरता है, कई साधकों को ऐसी स्थिति में घण्टे की आवाज या चिड़ियों की चीं चीं, ढोल, वीणा या मेघ गर्जन आदि के शब्द सुनाई देता है, ये सारी स्थितियां इस बात की द्योतक होती हैं कि साधक के कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई है ।

जब यह प्रकाश का वेग मूलाधार से आगे की ओर बढ़ता है तो धीरे-धीरे चित्त का सम्बन्ध देह से छूट कर अन्तर्जगत से जुड़ जाता है, तब उसके मन में एक अपूर्व शान्ति और आनन्द का अनुभव होने लगता है।

शरीर स्थित कई चक्रों का मूलाधार सुषुम्ना है जो अत्यन्त सूक्ष्म, ज्ञानवाहक एवं गतिवाहक -नाड़ी युगल के रूप में मेरुदण्ड के भीतर छिपी हुई रहती है, आगे चल कर यह नाड़ी युगल मेरुदण्ड से बाहर आकर कई स्थानों पर नाड़ी -गुच्छक के रूप में बन जाती है, ये ही नाड़ी गुच्छक '**चक्र**' कहलाते हैं ।

1. मूलाधार चक्र

यदि व्यक्ति ध्यान लगाने का अभ्यास करता है तो उसे यह चक्र जामुनी रंग का दिखाई देता है जिसमें लालिमा विशेष रूप से झलकती है, यह पृथ्वी तत्व प्रधान चक्र है जो हाथी की सूंड की तरह बना हुआ है, इसी को **मूलाधार चक्र** कहा जाता है, साधक को सर्वप्रथम यहीं से अभ्यास प्रारम्भ करना चाहिए और अपने मन को ध्यानस्थ करके इस चक्र के दर्शन करने का प्रयत्न करना चाहिए।

प्रारम्भ में प्रयत्न करने पर साधक को दीप शिखा के समान रोशनी, धुंधला सा प्रकाश या कभी-कभी ज्वाला सी भी दिखाई देने लग जाती है, कुछ साधकों को यह चक्र सर्प के आकार का भी दिखाई दिया है, और कुछ को शालिग्राम की काली पिण्ड जैसा चक्र भी अनुभव हुआ है, प्रारम्भिक अवस्था में यहां पर कभी प्रकाश दिखाई दे देता है और कभी यह प्रकाश लुप्त हो जाता है ।

प्रारम्भिक स्थिति

जब साधक प्राणायाम के द्वारा मूलाधार को स्पर्श करता है तो कई विचित्र अनुभव स्वभावतः होने लगते हैं, जैसे पसीना आ जाना, भय से शरीर कंपित होना, अर्द्ध मूर्छा सी आ जाना, नसें खिंचना, पिशाब हो जाना, अथवा प्राण निकलते हुए से अनुभव होना आदि स्थितियां प्रारम्भ में हो जाती हैं, इससे साधक को घबराना नहीं चाहिए, यदि ऐसी स्थिति हो जाय तो साधक को दो-चार रेचक प्राणायाम कर लेने चाहिए जिससे कि यह सब कुछ शान्त हो जाता है, कभी-कभी साधक को सुन्दर प्राकृतिक दृश्य देवताओं या सिद्धों के दर्शन और अच्छे दृश्य भी दिखाई दे जाते हैं।

गुदा से ऊपर अन्दर गणेश चक्र तक बड़ी आंतों का और सुषुम्ना के तंतुओं का संगठित रूप ही '**मूलाधार चक्र**' कहलाता है, प्रारम्भ में प्रयत्न करने पर व्यक्ति इसके दर्शन कर सकता है ।

2. स्वाधिष्ठान चक्र

यह चक्र मूलाधार के लगभग चार अंगुल ऊपर मेरु दण्ड के सम्मुखी भाग में, मूत्राशय, गर्भाशय, मलाशय के मध्य में जो

शुक्र-कोष नामक ग्रन्थि है, वहीं पर देखा जा सकता है, सात्विक अवस्था में यह नीलम के कटोरे से भरे गंगाजल के समान दिखाई देता है, इसमें से समस्त देह तथा प्राणों को तृप्ति और शान्ति देने वाली भाप उठती रहती है, इस चक्र पर संयम करने से ब्रह्मचर्य साधन में विशेष सहायता मिलती है, इस चक्र पर वैराग्य युक्त भावना का प्रकाश डाल कर साधक काम पर विजय प्राप्त कर सकता है।

3. मणिपुर चक्र

इसे '**नाभि चक्र**' भी कहते हैं, यह नाभि प्रदेश में मेरुदण्ड के सामने स्थित है, मनुष्य का देह केन्द्र नाभि है, वहां पर हजारों नाड़ियां आकर मिली हैं और यहीं से ये नाड़ियां पुनः निकल कर ऊपर-नीचे सभी अंग-प्रत्यंगों में जाती हैं, जिससे नाड़ियों का एक चक्र सा बन जाता है, इसी चक्र को '**मणिपुर चक्र**' कहते हैं ।

यह चक्र अग्नि तत्व प्रधान है और इसका आकार उगते हुए सूर्य के समान दिखाई देता है, गर्भ में स्थित भ्रूण को पालक रस इसी केन्द्र से मिलता है जिससे गर्भ बढ़ता है अतः यह स्पष्ट है कि इस केन्द्र के मार्ग से देह में प्रविष्ट होने पर सम्पूर्ण शरीर का विज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

मणिपुर चक्र के दर्शन साधक को होने पर वह पूर्ण रूप से संयमित और योगी बन जाता है।

कुछ साधकों ने मणिपुर चक्र के पास सूर्य और चन्द्र नामक दो चक्र और माने हैं, सूर्य चक्र नाभि से कुछ ऊपर दक्षिण भाग की तरफ जिगर में स्थित है, 'यह अग्नि तत्व'

प्रधान है और यहां जब साधक ध्यानस्थ होता है तो हजारों सूर्य एक साथ उगे हों, ऐसा दिव्य प्रकाश दिखाई देता है।

'चन्द्र चक्र' नाभि से कुछ ऊपर तिल्ली या प्लीहा में स्थित है, यहां से जो रस निकलता है वह हमारे भोजन को पचाने में सहायक होता है वहां पर जब साधक अपने ध्यान को केन्द्रित करता है तो उसे अत्यन्त शीतल मन्द प्रकाश अनुभव होता है।

4. अनाहत चक्र

सीने के दोनों फेफड़ों के मध्य रक्ताशय नामक मांस पिण्ड के भीतर एक छोटे से रिक्त में यह चक्र विद्यमान है यह रिक्त स्थान हाथ की सबसे छोटी उंगली के पोर के समान छोटे अंगूर जितना लम्बा-चौड़ा होता है और इसी में यह चक्र विद्यमान होता है, जब साधक की प्रथम दृष्टि इस पर पड़ती है तो उसे खिले हुए कमल की कलिका के समान यह चक्र दिखाई देता है, इसमें से शुक्र तारे के समान प्रकाश निकलता हुआ अनुभव होता है और इसका रंग गुलाबी वायु प्रधान होता है, यहीं पर ध्यान केन्द्रित करने पर साधक को आत्मा-परमात्मा का दर्शन होने लगता है और दिव्य नेत्र प्राप्त होता है, ऐसा दर्शन होने पर आत्मा की अनुभूति अहंकार रहित हो जाती है, सही रूप में देखा जाय तो जीवात्मा का निवास इसी स्थान में है,

प्रसिद्ध योगी श्री अरविन्द ने जीवात्मा की स्थिति यहीं मानी है।

कुछ योगियों ने अनाहत चक्र के दायीं ओर विशुद्ध चक्र के नीचे दक्षिण स्तन के अन्दर एक मनश्चक्र की स्थिति मानी है जिसे **'लोवर माइन्ड'** कहा जाता है, यहीं पर प्रभाव देकर अन्तर्मन को जाग्रत किया जा सकता है।

5. विशुद्ध चक्र

यह चक्र हृदय के ऊपर कण्ठ प्रदेश में हंसली नामक हड्डी के अन्दर थाईराईड ग्रन्थि के पास स्वर यन्त्र या टेंटुए में है, यह चक्र अन्दर से सफेद और बाहर आसमानी रंग का होता है, इसके सोलह छल्ले होते हैं, इसीलिए विशुद्ध चक्र को सोलह दलीय कमल कहा कहा गया है, यहीं से गान विद्या के आधारभूत स्वर प्रकट होते हैं, अत: यह मान्यता है कि यहां पर संयम करने से साधक दिव्य श्रुत बन जाता है, क्योंकि यही स्थान शब्द ब्रह्म मध्यमा अवस्था या वैखरी रूप कहा गया है, यहां पर ध्यानस्थ होने से व्यक्ति भूख-प्यास को हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त कर सकता है।

6. आज्ञा चक्र

यह चक्र भ्रूमध्य में स्थित ललाट कोटर के गर्त में है, दूसरे शब्दों में यह चक्र दोनों भौहों के बीच में है जहां स्त्रियां बिन्दी लगाती हैं, इस चक्र का आकार दीप शिखा के समान होता है, इस चक्र का महत्व विशेष है क्योंकि इस पर प्रकाश डालने से और इस चक्र को साधने से व्यक्ति हजारों मील दूर के दृश्य को देखने में समर्थ हो पाता है, यहीं ध्यान को केन्द्रित करने पर सिद्धों के दर्शन होते हैं, यहां पर जब साधक ध्यानस्थ हो जाता है तो उसका स्थूल देह का व्यवधान मिट जाता है और अन्तरिक्ष में घूमने वाले सिद्धों के दर्शन कर सकता है।

जब साधक संयम कर आज्ञा चक्र पर प्रकाश देखने में समर्थ हो जाता है तब वह प्रत्येक प्रकार का संकल्प पूर्ण कर किसी भी प्रकार की शक्ति प्राप्त कर सकता है, इसी को शिव का **'तृतीय नेत्र'** कहा गया है जिसके माध्यम से उन्होंने मदन दाह किया था।

भ्रूमध्य के अन्दर इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियां परस्पर मिलती हैं और इसीलिए इनको त्रिवेणी-संगम ज्ञान-नेत्र या भ्रामरी गुहा कहा जाता है।

7. सहस्रार

इसे **'दशम द्वार'** या **'ब्रह्मरन्ध्र'** भी कहते हैं, यह स्थान कनपटियों से दो-दो इंच अन्दर भ्रकुटी से लगभग तीन इंच अन्दर, बड़े मस्तिष्क के मध्य में कण्ठ में 'काक' से दो उंगल ऊपर मस्तिष्क स्थित महाविवर नामक महा-छिद्र में एक ज्योति पुंज के रूप में स्थित रहता है, यह ऊपर सूर्य के समान प्रकाशमान और अन्दर से मर्करी लाइट के समान दिखाई देता है, सही रूप से जीवात्मा का मोक्ष द्वार यही है, और विरले योगी सहस्रार पर अधिकार प्राप्त कर सकते हैं, योग शास्त्र में कहा गया है कि जो योगी सहस्रार में स्थिति प्राप्त कर लेते हैं वे पूर्ण रूप से स्वच्छन्द, शोक और बंधन से मुक्त हो कर मनोवांछित जीवन प्राप्त कर सकते हैं, मृत्यु इनके नियन्त्रण में होती है और जब चाहें तभी मृत्यु इनके पास आने की हिम्मत कर सकती है, ऐसे योगियों को अणिमादि अष्ट सिद्धियां, नवनिधियां और समस्त प्रकार की विभूतियां प्राप्त हो जाती हैं ऐसा साधक परम विज्ञानी त्रिकालदर्शी बन जाता **वस्तुत: ऐसा जीवन ही वास्तविक श्रेष्ठ और दिव्य जीवन कहा जा सकता है जो स्व प्रयत्नों से या गुरु-कृपा से अथवा शक्तिपात के माध्यम से कुण्डलिनी जागरण प्राप्त करना चाहिए जिससे हमारा मानव जीवन सार्थक हो सके।**

शिष्य धर्म

त्वं विचितं भवतां वदैव देवाभवावोतु भवतं सदैव।
ज्ञानार्थ मृल मपरं महितां विहंसि शिष्यत्व एवं भवतां भगवद् नमामि।।

शिष्य क्या है? क्या केवल मुंह से जय गुरुदेव कहने से या फूल माला चढ़ाने से या चरण स्पर्श करने से व्यक्ति शिष्य हो जाता है? सद्गुरुदेव परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानंद जी के अनुसार ये तो मात्र गुरु भक्ति की अभिव्यक्ति के साधन मात्र हैं। शिष्य तो व्यक्ति तब होता है, जब उसमें कुछ विशेष गुण उत्पन्न होते हैं। क्या हैं वे गुण? आइए जानें।

- जो प्रत्येक क्षण नवीन गुणों का अनुभव करते हुए अपने जीवन में उन गुणों को उतारता है उसे शिष्य कहते हैं।
- जब हमारा शिष्य रूप दब जाता है तब राक्षस वृत्ति हम पर हावी हो जाती है क्योंकि चारों ओर का वातावरण ही राक्षस वृत्ति का है। इसलिए शिष्य को चाहिए कि वह बाहर के दूषित वातावरण से स्वयं को बचाए रखे।
- शिष्य वह होता है जो अपनी जान हथेली पर रख कर चलता है। वह समस्याओं से, जीवन की विडम्बनाओं से घबराता नहीं। अपितु हर क्षण गुरु तत्व का अनुभव करते हुए हर विकट परिस्थिति से जूझता रहता है और कभी हार नहीं मानता।
- जहां सेवा है वहां शिष्यता है। सेवा का अर्थ है इस संताप युक्त जीवन में गुलाब के फूलों को विकसित करने में गुरु का सहयोग देना और सहयोग देने के लिए तूफान आंधी के बीच तन कर खड़े हो जाना।
- गुरु को मानसिक शांति मिले, उनके कार्यों में हम सहयोगी हों यही शिष्य का धर्म है जिससे कि वे उस ज्ञान का प्रसार कर सकें जो कि जीनव का मूल तत्व है, जीवन की पूर्णता है।
- गुरु शिष्य के बीच जो डोर है वह प्रेम की डोर है और जिस व्यक्ति के हृदय में प्रेम है वही वास्तविक अर्थों में शिष्य है और प्रेम वास्तव में या तो गुरु से हो सकता है या ईश्वर से हो सकता है। उस प्रेम की लौ को अपने हृदय में, अपने जीवन में जाग्रत करना सच्ची शिष्यता है।
- जब शिष्य के हृदय में गुरु के लिए प्रेम होगा तो बाहर के छल, झूठ, अहंकार, स्वार्थ उस पर हावी नहीं हो पाएंगे। तब वह पूर्ण तन्मयता से और पूर्ण मनोभाव से गुरु सेवा कर सकेगा, गुरु में लीन हो सकेगा, गुरु तत्व को आत्मसात कर सकेगा।
- प्रेम का अर्थ है अपने आपको मिटा देने की क्रिया। मिटा देने का अर्थ है अपने अहंकार को समाप्त कर देने की क्रिया और जो अपने अहंकार को समाप्त कर देता है वह मनुष्यता से भी ऊपर उठकर देवत्व की स्थिति प्राप्त कर लेता है। ऐसा करना ही शिष्य का धर्म और कर्तव्य है।

- साधना में सफलता की एकमात्र कुंजी है गुरु में पूर्ण आस्था, मंत्र में पूर्ण विश्वास और उस देवी देवता में विश्वास जिसकी आप साधना कर रहे हैं।
- अगर विश्वास नहीं है, समर्पण का भाव नहीं है और मन की एकाग्रता नहीं है तो साधना में सफलता नहीं मिल सकती चाहे फिर आप लाखों मंत्र जप क्यों न कर लें।
- और अगर आस्था है, समर्पण का भाव है और गुरु में विश्वास है और विश्वास नहीं दृढ़ विश्वास है तो साधना में कोई त्रुटि भी रह जाए तो भी गुरु सफलता प्रदान कर देता है, सिद्धि प्राप्त करा देता है।
- कोई साधना में सिद्धि प्राप्त करना इतना कठिन काम नहीं है। एक सामान्य व्यक्ति भी कर सकता है। कठिन कार्य है समर्पण, पूर्ण विश्वास और आस्था अपने मन में पैदा करना।
- विशेष कार्यो की सफलता हेतु विशेष साधना से पहले गुरु से आज्ञा ले लें या उस साधना से संबंधित दीक्षा ले लें तो साधना में सफलता की संभावना हजार गुना बढ़ जाती है।
- और गुरु हर क्षण देने को तत्पर हैं, आवश्यकता है कि आप बढ़ कर उससे प्राप्त करें। सागर आप तक चल कर नहीं जाएगा, आपको ही सागर तक चल कर जाना होगा और उसमें छलांग लगाकर उसमें से मोती निकालने होंगे।
- सागर कभी मना नहीं करता कि मोती मत निकालो, गुरु भी अपना ज्ञान प्रदान करने के लिए कभी मना नहीं करता। मगर प्राप्त होगा तभी जब आप उस तक पहुंचेंगे जब आपको विश्वास होगा कि हां इसके पास कुछ है। आस्था और विश्वास ही साधनाओं में सफलता की कुंजी है।
- मैं तुम्हें दीक्षा देता हूँ तो तुम्हें साधना करने की आवश्यकता नहीं है, तुम्हें सिर्फ गुरु मंत्र का सतत् जप करना है, प्राप्त करना है मुझसे, बस! तुम्हें उसमें कुछ करने की जरूरत नहीं, बस पूर्णता के साथ प्राप्त करें जो चैतन्यता मैं तुम्हें देता हूँ। मैं यह नहीं कहता कि पालथी मारकर पांच घंटे मंत्र जप करो, छः महीने में सवा लाख मंत्र जप करना है यह भी नहीं कहता, मैं दीक्षा के माध्यम से तुम्हें दिव्यता और चैतन्यता देता हूँ, बस आवश्यक है कि तुम स्वीकार करने की हिम्मत रख सको।
- अगर तुममें स्वीकार करने की हिम्मत और क्षमता ही नहीं है, जो चैतन्यता मैं प्रवाहित करता हूँ, उसे ग्रहण करने की क्षमता ही नहीं है तब तो विधाता स्वयं आकर भी तुम्हें ज्ञान और चेतना दे यह भी व्यर्थ हो जाएगी।
- जो कुछ मैं दूं आप उसे स्वीकार करें और स्वीकार करने के लिए तुम्हारा मुझसे संपर्क सीधा हो नेत्रों के माध्यम से, तुम नेत्रों से बिल्कुल देखने की क्षमता रख सको। आखें झपकें नहीं, इधर-उधर देखो नहीं। और यदि ऐसा है तो तुम दीक्षा के माध्यम से बहुत कुछ प्राप्त कर सकते हो।
- अकंप भावेन सिद्धिर्वै भवः। जब आप अकंपित होकर के, बिना हिले-डुले, स्थिर बैठ करके साधना करोगे या दीक्षा प्राप्त करोगे तो कुछ प्राप्त हो पाएगा। प्राप्त होने के लिए तुम्हारा अकंप भाव होना जरूरी है। अगर तुम हिलते हो तो तुम प्राप्त नहीं कर पाओगे।

अदृश्य ब्रह्माण्ड के अज्ञात साधनात्मक रहस्य

तीस लम्बे वर्ष . . . और तीस वर्षों में अनगिनत ऐसे अवसर आए, जब गुरु ने समय-समय पर नवीन विधि, नवीन प्रक्रिया का प्रयोग किया, परन्तु शिष्य को जिस उच्च स्तर पर लाकर खड़ा करना चाहते थे. वह मंजिल अभी भी कोसों दूर प्रतीत हो रही थी, फिर भी शिष्य का विश्वास ऐसा, कि सन्देह का प्रस्फुटन होने से पहले ही वह उसे दबाकर गुरु आज्ञा में रत हो जाता।
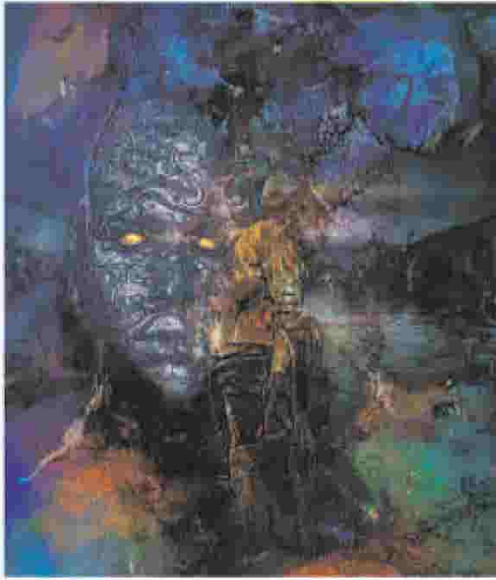
अगला एहसास बड़ा विचित्र था, 'शायद यही मृत्यु है'–उसने सोचा। शरीर हल्का हो गया और वह स्वच्छंद तैरने लगा। ऊपर देखा, तो गुरु खाई के छोर पर खड़े रस्से को पूरी क्षमता से ऊपर खींच रहे थे। एक बार हौले से उसकी ओर देख कर मुस्कुरा कर गुरु फिर से रस्सा खींचने में लग गए।

हां कभी-कभी विचार अवश्य कौंध जाता, कि इतनी विधियों के बाद भी गुरु प्रदत्त साधनाएं असफल रहें, क्यों ऐसा हुआ? गुरु तो सर्वज्ञ होते हैं, उनसे कुछ छिपा नहीं होता। अगर वे जानते हैं, कि विधियां नाकाम सिद्ध होंगी, तो फिर उन्होंने उनका प्रयोग बताया ही क्यों?

परन्तु वही एक ऐसा शिष्य था, जो पूर्ण चैतन्यता को अभी तक प्राप्त नहीं कर पाया था। कितने ही शिष्य थे उनके, जो पूर्णता पाकर हर्ष और असीम आनन्द से सराबोर हो उठे थे। ऐसे में सन्देह कहां रह जाता?

'अवश्य मुझमें ही कोई त्रुटि है' - सोचकर शिष्य अपने मन को समझाता।

उधर गुरु उसके विचारों कोई पढ़ मन ही मन मुस्कुरा उठते और उस मुस्कुराहट में छिपा होता इस लम्बी परीक्षा का रहस्य, अभी तक की सारी विधियां तो केवल उस शिष्य को तैयार करने की प्रक्रिया मात्र ही थी। अब तीस वर्षों बाद वह अवसर आ खड़ा हुआ था जब, 'चलो मेरे साथ', कहकर गुरु आगे बढ़ गए। बिना प्रश्न किए शिष्य गुरु के पीछे चलने लगा। गुरु के कन्धे पर मोटा रस्सा लटका था। चलते-चलते वे एक ऐसे ने स्थान पर पहुंचे जहां सामने ही कुछ कदम पर गहरी खाई थी और - दो सौ फीट नीचे नदी की तीक्ष्ण धारा प्रवाहित हो रही थी एक पर्वतीय नदी। नीचे झांककर देखने से ही लगता, कि इसमें गिरे तो गए काम से!

'देखो नीचे', गुरु ने कहा। देखकर शिष्य एक बार तो सिहर उठा और एकाएक कल्पना के सागर में खो गया, इसमें गिरा तो क्या होगा?

गुरु की वाणी ने अचानक उसकी तन्द्रा को भंग किया।

देखो, तुम्हें इस रस्से के सहारे इस खाई में उतरना है। कुछ पचास फुट नीचे तुम्हें एक जड़ी मिलेगी, जो प्राप्त करनी है। लो इस रस्से को कमर पर बांध लो, कहकर रस्से को स्वयं शिष्य की कमर पर बांधने लगे। मजबूती से तीन गांठे लगाई और कहा–

'सामने नदी की ओर मुख कर आंखें बन्द कर प्रार्थना करो, कि को खतरा न आ बने।'

आंखें बन्द कर शिष्य गुरु मंत्र बुदबुदाने लगा। तभी अचानक पीछे से जोर से धक्का लगा और खाई में वह गिर पड़ा। मुख से चीख निकल पड़ी और गिरते-गिरते अवश्यम्भावी मृत्यु को देख एकाएक जीवन काल के सारे दृश्य स्मृति पटल पर चलचित्र की भांति उभरने लगे। कहां जन्म हुआ, कैसे बड़ा हुआ, कब गुरु के पास पहुंचा और कैसे उन्हीं गुरु ने अब...

गिरने में मानों वर्ष लग गए परन्तु वास्तव में सब कुछ क्षण मात्र में हुआ और जीवन के अन्तिम पड़ाव की याद आते-आते सब कुछ शून्य हो गया, सब ओझल हो गया। आखिरी विस्मृति थी, कि शरीर को एक झटका लगा, मानों बीच में कहीं से अटक गया हो, किसी झाड़ में या...

अगला एहसास बड़ा विचित्र था, 'शायद यही मृत्यु है'-उसने सोचा। शरीर हल्का हो गया और वह स्वच्छंद तैरने लगा। ऊपर देखा, तो गुरु खाई के छोर पर खड़े रस्से को पूरी क्षमता से ऊपर खींच रहे थे। एक बार हौले से उसकी ओर देख कर मुस्कुरा कर गुरु फिर से
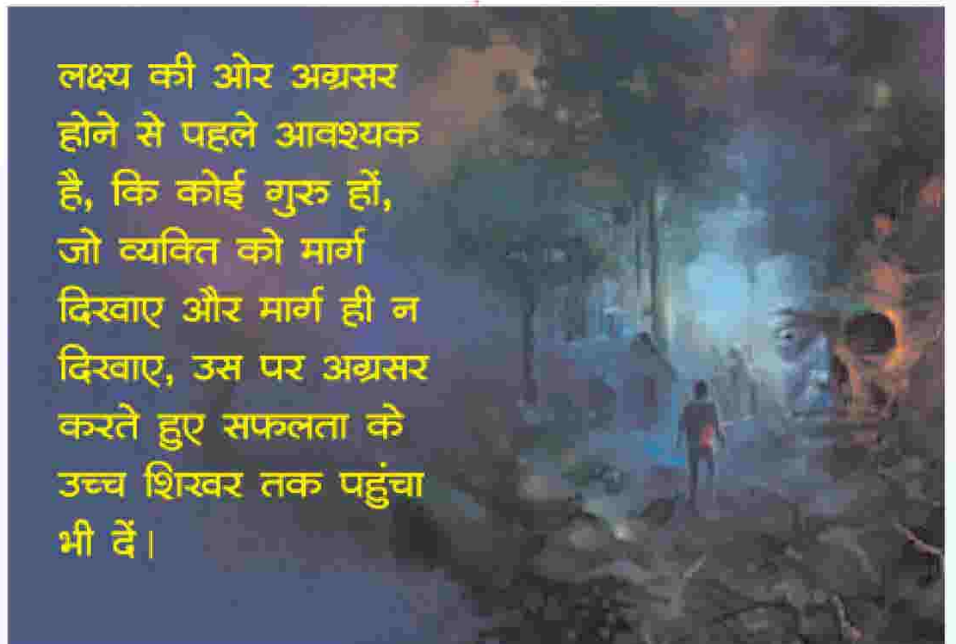
स्थूल शक्तियों के अलावा भी सूक्ष्म शक्तियां, अदृश्य चेतना विद्यमान हैं, जिनको प्राप्त कर असम्भव को भी सम्भव किया जा सकता है।

वस्तुतः संसार वैसा है नहीं जैसा दिखता है-ठोस हो, तरल हो या वायवीय, हर पदार्थ के पीछे मूलभूत शक्ति एक ही है, यह तो विज्ञान भी आज सिद्ध कर चुका है।

इस शक्ति का न तो कोई स्वरूप है, न ही इसकी कोई सीमा। हां, शक्तियों के भिन्न तल अवश्य हैं-जैसे स्थूल, सूक्ष्म, अति-सूक्ष्म और विशुद्ध चैतन्य।

रस्सा खींचने में लग गए।

'क्या कर रहे हैं, आप?' अचानक लगा वाणी खो गई है केवल विचार संप्रेषित हुआ, परन्तु गुरु ने विचार पकड़ लिया और कहा, 'देख नहीं रहे हो, तुम्हारे शरीर को ऊपर खींच रहा हूं।'

फिर देखा, तो आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसका अपना शरीर शिथिल सा रस्से से झूल रहा था और गुरु उसे खींच रहे थे। कुछ समझ नहीं आ रहा था। तभी याद आया, कि खाई में गिरने से पहले गुरु ने कमर पर रस्सा बांधा था। मृत्यु के भय के कारण यह तो उसे सूझा नहीं था, कि गुरु ने पहले ही उसकी सुरक्षा व्यवस्था कर ली थी।

शरीर ऊपर खींचकर गुरु ने नाभि केन्द्र पर हल्के से स्पर्श किया। एकाएक सब कुछ धुंधला हो उठा और फिर वही मृत्यु पूर्व सा अन्धकार छा गया।

'उठो! उठो!' मानो कहीं सदियों पहले से ही यह वाणी बार-बार मस्तिष्क पर प्रहार करने लगी। धीरे-धीरे वाणी संयमित प्रतीत हुई और जैसे ही आंखें खुली, तो सूर्य की किरणों के कारण चौंधिया गई।

आंखों को मलता हुआ शिष्य हड़बड़ा कर उठ खड़ा हुआ और गुरु को सामने देख और स्वयं को स्वस्थ पा हर्ष के उद्वेग में आंसू बहाने लगा।

गुरु ने उसे गले से लगा लिया और कुछ क्षणों बाद वहीं पर दीक्षा प्रदान कर पूर्णता प्रदान की।

सांसारिक जीवन में फंसे हम मानव अक्सर जीवन के उस अदृश्य पक्ष से अछूते ही रह जाते हैं, जिससे सम्पर्क स्थापित कर न केवल सांसारिक स्तर पर अपितु आध्यात्मिक तल पर भी उच्चता एवं श्रेष्ठता प्राप्त की जा सकती है। ऋषियों ने संसार को माया कहा है, इसलिए नहीं, कि यह संसार झूठा है अपितु इसलिए, कि स्थूल शक्तियों के अलावा भी सूक्ष्म शक्तियां, अदृश्य चेतना विद्यमान हैं, जिनको प्राप्त कर असम्भव को भी सम्भव किया जा सकता है। वस्तुतः संसार वैसा है नहीं जैसा दिखता है-ठोस हो, तरल हो या वायवीय, हर पदार्थ के पीछे मूलभूत शक्ति एक ही है, यह तो विज्ञान भी आज सिद्ध कर चुका है। इस शक्ति कोई न तो कोई स्वरूप है, न ही इसकी कोई सीमा। हां, शक्तियों के भिन्न तल अवश्य हैं-जैसे स्थूल, सूक्ष्म, अति-सूक्ष्म और विशुद्ध चैतन्य।

आत्मा विशुद्ध चैतन्य शक्ति है और उससे सम्पर्क कर मनुष्य कठिन से कठिन कार्य को भी आसानी से कर पाता है, क्योंकि सम्पर्क स्थापित होते ही एक ऐसे अदृश्य ब्रह्माण्ड के द्वार स्वतः खुल जाते हैं। वहां विद्यमान सम्भावनाओं का क्षेत्र इतना असीम है, कि कुछ भी असम्भव नहीं रह जाता। तब व्यक्ति एक स्थान पर बैठा सैकड़ों-करोड़ों मील दूर की घटनाओं को देख पाता है, मात्र विचार संक्रमण द्वारा दूसरों के विचार परिवर्तित कर घटनाओं में फेरबदल कर सकता है, विद्युत गति से एक स्थान से दूसरे स्थान जा सकता है, मात्र विचार शक्ति द्वारा पर्वतों को हिला सकता है, सशरीर उड़ सकता है, अपना स्वरूप परिवर्तित कर सकता है, किसी अन्य ग्रह पर जा जा सकता है.......

सम्भावनाएं अनन्त हैं और उनका बखान करने या मात्र वर्णन करने या चर्चा करने से भी कोई लाभ नहीं। पुस्तकें पढ़ने से मात्र एक थोथा ज्ञान प्रसारित होता है, जबकि यह एक विज्ञान है और विज्ञान की मूलभूत आवश्यकता होती है, कि परख कर देख लिया जाए। बिना प्रयत्न करे कुछ हासिल नहीं होगा और प्रयत्न द्वारा तो मात्र पांच पाण्डवों ने योगेश्वर श्रीकृष्ण की इन्हीं अद्‌भुत शक्तियों के बल पर महाभारत युद्ध जीत लिया था।

प्रयत्न की ओर अग्रसर होने से पहले आवश्यक है, कि कोई गुरु हों, जो व्यक्ति को मार्ग दिखाए और मार्ग ही न दिखाए, उस पर अग्रसर करते हुए सफलता के उच्च शिखर तक पहुंचा भी दें।

इस अद्‌भुत विज्ञान की सर्वप्रथम आवश्यकता है आत्म बोध होना, यानि जा पहुंचना। तब एहसास होगा, कि यह शरीर मात्र व्यक्ति नहीं है अपितु आत्मा है जो उसे चलायमान कर रही है। ऐसा बोध होने का अर्थ यह नहीं है, कि इन शब्दों को तोते की तरह रट लिया जाए। यह तो एक प्रैक्टिकल विधि है आत्मा को शरीर से बाहर निकालने की।

यों बोधपूर्वक आत्मा बाहर निकालने से व्यक्ति मर नहीं जाएगा, क्योंकि सम्पर्क तो आत्मा से बना ही रहेगा। हां, चेतना शरीर से बाहर होकर स्वच्छंद हो जाएगी और असीम क्षमताओं से पूरित होने के कारण असम्भव से असम्भव कार्य भी व्यक्ति पूरा कर पाएगा।

अधिकतर मनुष्य सांसारिक जीवन से इस प्रकार जकड़े होते हैं, कि उनके मोह को भंग
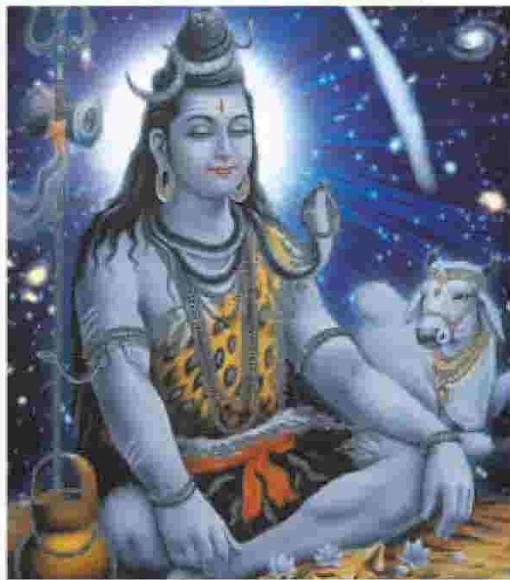
आत्मा विशुद्ध चैतन्य शक्ति है और उससे सम्पर्क कर मनुष्य कठिन से कठिन कार्य को भी आसानी से कर पाता है, क्योंकि सम्पर्क स्थापित होते ही एक ऐसे अदृश्य ब्रह्माण्ड के द्वार स्वतः खुल जाते हैं।

करने के लिए, गुरु को अनेकों प्रक्रियाएं अपनानी पड़ती हैं। तभी वे जाग्रत हो पूर्णता प्राप्ति के लक्ष्य की ओर अग्रसर हो पाते हैं। इनमें शामिल हैं दीक्षा, गुरु-सेवा, साधना, अनेकों परीक्षाएं एवं तंत्र विधियां।

तंत्र का अर्थ अन्यथा न लें। समाज में इस शब्द को लेकर बहुत भ्रम है, जो कि इसके वास्तविक स्वरूप से बिल्कुल भिन्न है। संक्षेप में तंत्र का अर्थ है, व्यवस्थित प्रकार से शरीर की चैतन्यता को जाग्रत करना।

साधना द्वारा, तंत्र द्वारा, मंत्रों द्वारा भी आत्मा को जाग्रत किया जा सकता है, बल्कि आत्मा तो जाग्रत होती ही है, व्यक्ति को जाग्रत कर आत्मा की अनन्त शक्तियों का बोध कराया जा सकता है।

इसी लक्ष्य को साधता एक अचूक साधनात्मक प्रयोग है।

शिव - शक्ति अदृश्य ब्रह्माण्ड भेदन प्रयोग

जिसके द्वारा व्यक्ति अपने भीतर स्थित ब्रह्माण्ड से एकीकृत हो जाता है और तब उसके समक्ष प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सभी रहस्य खुलने लगते हैं, फिर वह भौतिक जगत के रहस्यों को तो जान ही लेता है साथ ही सूक्ष्म जगत के सभी रहस्यों को भी ज्ञात कर सकता है।

उदाहरणतः यह मात्र कल्पना नहीं, कि हमारे ऋषि-मुनि पेड़-पौधों से वार्तालाप कर उनके गुणों और उनके औषधीय प्रयोगों को जान लेते थे। वार्तालाप का यहां अर्थ उन सूक्ष्म तरंगों से है, जो कि पेड़-पौधे सम्प्रेषित करते हैं। वे उन तरंगों को पकड़कर विश्लेषण करते और जान लेते थे, कि कैसे उनका प्रयोग करते हैं, या किया जा सकता है? विज्ञान यह भी सिद्ध कर चुका है और **सर्वप्रथम एक भारतीय वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र बोस ने ही सिद्ध किया था, कि पेड़-पौधे भी संवेदनशील होते हैं और उनसे सम्पर्क किया जा सकता है।** हो सकता है, कि भविष्य में विज्ञान ऐसे यंत्र विकसित कर ले, कि वह पेड़-पौधों से प्राप्त तरंगों का विश्लेषण कर उनकी उपयोगिता को सिद्ध कर दे। परन्तु सच मानें तो इसकी आवश्यकता नहीं, क्योंकि आत्मा द्वारा पेड़-पौधों से ही नहीं, करोड़ों मील दूर अन्य ग्रहों के प्राणियों से भी सम्पर्क किया जा सकता है।

केवल एक कुंजी यानि आत्मा द्वारा हम अनन्त क्षमताओं को प्राप्त कर सकते हैं, तब यंत्रों की क्या आवश्यकता? और वैसे भी विज्ञान ने ऐसे यंत्र अधिक बनाए हैं, जिनके कारण आज पृथ्वी पर जीवन ही खतरे में है। इसका कारण है, कि यह विज्ञान सन्तुलन नहीं बनाता, जबकि आत्मिक शक्तियां प्राप्त ही तभी होती हैं जब व्यक्ति संयमित हो और प्रकृति, ईश्वर और गुरु को भरोसा हो, कि व्यक्ति विशेष इनका दुरुपयोग नहीं करेगा।

शिव-शक्ति अदृश्य ब्रह्माण्ड भेदन प्रयोग से एक उच्चकोटि का विशिष्ट अचूक एवं पहली ही आत्मोपलब्धि होती है। स्वयं की न्यूनताओं और समग्र श्रद्धा के अभाव के कारण अवश्य चूक हो सकती है, इसलिए पूर्ण श्रद्धा विश्वास एवं स्वच्छ मनोवृत्ति से प्रयोग सम्पन्न करना चाहिए। किसी भी विज्ञान में प्रयोग हेतु यह आवश्यक होता है, कि पूर्ण विश्वास, संयम, अनुशासन से प्रयत्न किया जाए और चूक हो भी जाए, तो फिर पूरे मनोवेग से प्रयत्न करें।

साधना सम्पन्न करने का उचित समय है प्रातः काल अथवा सायंकाल गोधूली का समय। उत्तर दिशा की ओर अभिमुख हो करके बैठ जाएं। स्वच्छ वस्त्र पहने हो तथा पीले आसन पर विराजें। सामने बाजोट पर पुष्प बिखेर दें और उन पर '**शिव-शक्ति यंत्र**' के चारों ओर चार घी के दीपक प्रज्वलित करें। साथ में गुरु चित्र को स्थापित करें और प्रथमतः गुरु मंत्र की 5 माला जाप करें। तत्पश्चात् '**शिव-शक्ति माल्य**' से निम्न मंत्र की 51 माला मंत्र जाप करें। मंत्र जप के समय अपनी दृष्टि को यंत्र के मध्य केन्द्रित रखें। यथासम्भव पलक को झपकने नहीं दें। जलन होने पर एक बार आंख बन्द कर पुनः उसी क्रिया में रत हो जाएं।

मंत्र

।। ॐ शं खं खं अदृश्य ब्रह्माण्ड ईं सौं औं ॐ ।।

OM SHAM KHAM KHAM ADRISHYA BRAHMAAND IEM SAOUM AOUM OM

इसके बाद प्रतिदिन एक मास तक 5 माला जप इसी विधि के साथ करें। बाद में एक दीपक पर्याप्त है। एक मास में ही विविध अनुभव होने लगेंगे, परन्तु अपने अनुभवों को गुरु के अलावा अन्य किसी को नहीं बताना चाहिए। आज्ञा चक्र पर स्पंदन हो सकता है, विचित्र स्वप्न दिख सकते हैं, घटनाओं का पूर्वाभास होने लग सकता है, दूसरों के विचार स्पष्ट होने लग सकते हैं और सूक्ष्म शरीर से साक्षात्कार हो सकता है। भय और भ्रम मुक्त होकर यह प्रयोग करें। साधना समाप्त होने पर यंत्र तथा माला नदी में विसर्जित कर दें।

न्यौछावर - 510/-

मन को एकाग्र करने एवं अन्तःकरण को शुद्ध एवं निर्मल करने में सहायक
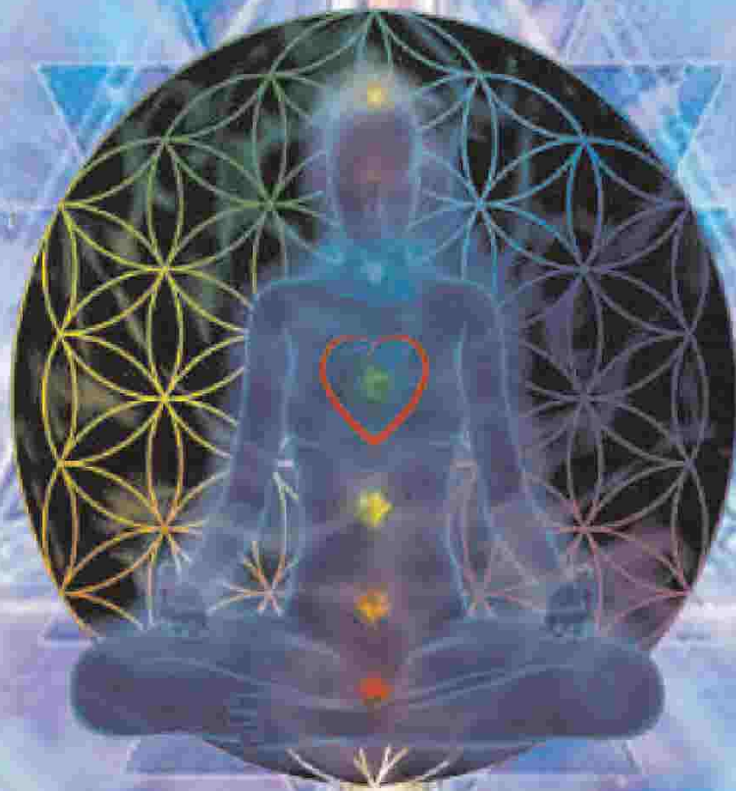
कुण्डलिनी जागरण साधना

मानव में सद्‌गुण तभी तक हैं जब तक तृष्णा से दूर है। तृष्णा का स्पर्श होते ही सब गुण गायब हो जाते हैं। इसका कोई अन्त नहीं है। तृष्णा के समान दूसरी कोई व्याधि नहीं है।

मोहब्बत अपने आप में एक शब्द नहीं, एक अंगड़ाई, एक खुमारी और अल्हड़ता का ही तो दूसरा नाम है और ठीक यही दशा क्या एक विद्रोही की भी नहीं होती? 'मोहब्बत में बगावत'? बड़ी अजीब सी बात लगती है, लेकिन यह अजीब तब नहीं रह जाती, जब कोई प्रेम की भावभूमि पर उतर जाता है, उसे कुछ-कुछ समझने लग जाता है और समझने से भी ज्यादा आत्मसात करने लग जाता है....

....फिर प्रेम में आत्मसात करने को और होता भी भला क्या है? यह भी एक अलग बात लगेगी, लेकिन प्रेम में जहाँ सब कुछ न्यौछावर कर देने की बात होती है, वहीं सब कुछ आत्मसात कर लेने की भी बड़ी मूक और बेपनाह हुस्न से भरी बात भी होती है। उसमें आत्मसात किया जाता है, तो अपने प्रिय की एक-एक अदा को, उसकी एक-एक चितवन को, उसके एक-एक स्मित को और उसके प्रत्येक कटाक्ष को।

एक तरह से अपने प्रिय से उसका वजूद चुरा लेने की, अगर वह मेरी तरह न बन सके, तो खुद उसकी तरह बन जाने की क्रिया प्रारम्भ हो जाती है और जब इस क्रिया में कोई व्यवधान आ जाता है, कोई रुकावट या नियमों की कोई बात आ जाती है, तब उसका उलाहना किसी और से नहीं, अपने प्रिय से ही तो होता है। मन किसी और से नहीं, उसी से, यानि की अपने प्रेमी से विद्रोह कर बैठता है।

लेकिन जब हम मोहब्बत में इस तरह बगावत करने को उतर आयें, तब एक घड़ी रुक कर अपने आपको टटोलना जरूरी हो जाता है। एक घड़ी, बस एक घड़ी ही! रुक कर अपने दिल को टटोलें, कि क्या हम वहां तक आ गए हैं, कि मोहब्बत में लड़ भी सकते हैं और क्षणों में इस बात को निर्धारित कर जो आगे बढ़ जाते हैं (या जो लड़ जाते हैं), जीवन का सौन्दर्य उन्हीं के लिए मानो रचा गया होता है। जो इस मोड़ पर खड़े-खड़े सोचते रह जाते हैं, वे पिछड़ जाते हैं और जो अपने हृदय की बात को सुन नहीं पाते, वे भी समाप्त हो जाते हैं।

....पर अगर दिल कहे, कि नहीं, अभी वह अकीदत, वह तवज्जोह नहीं आ पाई है, कि हम मोहब्बत में बगावत की बात करें, तो रुक कर फिर से वहाँ तक की साधना करनी पड़ती है, कि हममें उसकी कुव्वत आ

सके। हम सभी इसी स्थिति को पाने के लिए ही तो साधना कर रहे हैं। राधा ने यही साधना स लतापूर्वक सम्पन्न कर ली थी और कृष्ण का सारा वजूद चुरा कर स्वयं इस तरह हो गई थी, मानो स्वयं कृष्ण ही उसके रूप में गतिशील हों। ऐसे व्यक्ति ही साधना की औपचारिकताओं से परे उठ कर मुक्त हो जाते हैं।

यदि कोई इसके पहले अपने को साधना से मुक्त समझ ले, तो उसकी बात किसी मिथ्या प्रलाप से कम नहीं। दरअसल इस स्थिति तक पहुँचने के बाद फिर व्यक्ति को स्वत: ही किसी क्रिया की, किसी बाह्य प्रपंच की आवश्यकता नहीं रह जाती। फिर उसे आह्वान करके ईश्वर को नहीं बुलाना पड़ता, उसे प्रार्थना करके ईश्वर को भोग अर्पित नहीं करना होता, अपितु उसकी समस्त क्रियाएं स्वत: ही संचालित होती हैं और शनै:-शनै: तो वह 'मैं' भी हटता चला जाता है, जो इस प्रेम की अद्वितीय घटना का साक्षीभूत होता है।

'मैं' का साक्षीभूत होना ही शास्त्रों में 'सविकल्प समाधि' कहा गया है और इस 'मैं' का भी विसर्जित हो जाना, तो 'निर्विकल्प समाधि' कहा गया है, जो कि योग की सर्वोच्च उपलब्धि होती है।

फिर भी इस प्रकार की निर्विकल्प समाधि में कुछ अंतर होता है। सामान्यत: तो निर्विकल्प समाधि एक ऐसी दशा होती है, जिसमें शास्त्रों के वर्णनानुसार यह देह बस पांच दिनों में 'वृक्ष से सूखे पत्ते की भांति झड़ जाती है'; लेकिन जो निर्विकल्प समाधि प्रेम के सोपानों को चढ़ती हुई आती है, वह ऐसी कोई दशा नहीं लाती, वहां तो एक अजीब सी दशा होती है। वह स्वयं के लिए तो एक विस्मृति की दशा होती है, जबकि शेष सभी के लिए आनन्द की। इसकी तुलना यदि की भी जाय, तो केवल एक शिशु से ही तो की जा सकती है, जो स्वयं में निमग्न रहता हुआ भी सभी के आनन्द का हेतु स्वत: ही बनता रहता है। क्या यही सहज समाधि नहीं है? क्या यही वह दशा नहीं है, जिसे कबीर ने कहा था–

संतो सहज समाधि भली
गुरु कृपा जा दिन ते उपजी, दिन-दिन अधिक चली।

मैं नहीं जानता, कि तथाकथित आधुनिक व्याख्याकार सहज समाधि की क्या व्याख्या कर रहे हैं, लेकिन मेरे लिए यह भी एक कुण्डलिनी की यात्रा ही है, जिसके 'मूलाधार' में वह स्थिति है, जहाँ साधक अपने चित्त को इस प्रकार जाग्रत कर लेता है, कि वह प्रेम निवेदन करने की मनोदशा में आने लगता है और कोई आवश्यक नहीं, कि यह प्रेम निवेदन बड़े जोर-जोर से हो। वस्तुत: प्रेम व्यक्त तो होता ही है मूक रूप में जब पलकें किसी को देख कर झुकने को बाध्य हो जायें, तो समझ लेना चाहिए, कि इस सहज समाधि की दशा में इस प्रेम-कुण्डलिनी का मूलाधार जाग्रत हो गया है।

'मूलाधार'
में वह स्थिति है, जहाँ साधक अपने चित्त को इस प्रकार जाग्रत कर लेता है, कि वह प्रेम निवेदन करने की मनोदशा में आने लगता है। जब पलकें किसी को देखकर झुकने को बाध्य हो जायें, तो समझ लेना चाहिए, कि इस सहज समाधि की दशा में इस प्रेम-कुण्डलिनी का मूलाधार जाग्रत हो गया है

फिर आता है वह चक्र, जिसे 'स्वाधिष्ठान' कहा गया है। प्रेम की यात्रा में स्वाधिष्ठान का तात्पर्य है, कि जो भक्त या प्रेमी या साधक अपना सर्वस्व लुटाने को तैयार है, उसमें एक चेतना आ गई है, यानि की जो अब तक उसके लिए भी अनजान सी क्रिया थी, वह अब उससे अनजान नहीं रह गया, वह एक प्रकार से समर्पित होने को तैयार हो गया है, अपने वजूद पर गर्वित होता हुआ भी उसे विलीन कर देने की क्रिया में जाने-अनजाने नहीं, वरन् सचेतन रूप से संलग्न हो गया है और मार्ग में आने वाली प्रत्येक बाधा को धकेलने को तत्पर हो गया है। इसी को मैंने प्रारम्भ में 'मोहब्बत में बगावत' की संज्ञा दी है।

योग जगत में स्वाधिष्ठान के बाद 'मणिपुर' का स्थान आता है। मणिपुर एक चक्र ही नहीं, एक भाव भी है। मणिपुर तो वह स्थान है, जो हमें स्मरण कराता है, कि हम इस जगत में सर्वथा अकेले नहीं आये थे। वही तो स्थान (अर्थात् नाभि) था, जिसको उदर में हमारी माता अपने से जोड़ कर पोषण करती

जिसमें अहं का मल न रह गया, जिसके चित्त की तलहटी में छुप कर दंभ न जमा रह गया, वही तो विशुद्ध चक्र की दशा में स्थित कहा जा सकता है, अन्यथा नेति-धौती से कुण्डलिनी 'जगाने' वाले तो पथभ्रष्ट होते देखे ही गए हैं।

रही। योग जगत में भी तो गुरु से तभी साक्षात सम्भव हो सकता है, जब हम अपनी नाभि या अपने मणिपुर या अपने 'स्व' को उससे जोड़ दें। योगी इसको नेति-धौति के माध्यम से जोड़ने का प्रयास करता है, लेकिन प्रेम पक्ष के यात्री को 'स्व' का इतना भान ही कहाँ, कि वह ऐसा कुछ कर सके। हो गया तब भी ठीक, नहीं हुआ तब भी इसकी चिंता नहीं रहती...

और गुरु स्वयं ही मातृ स्वरूप में अपनी नाभि से उसकी नाभि का सम्पर्क इस प्रकार कर लेते हैं, जिस प्रकार माता अपने उदरस्थ शिशु का करती है। यही वह दशा है, जब प्रेम में अठखेलियाँ समाप्त हो कर गंभीरता की स्थिति प्रारम्भ हो जाती है।

.... और जहाँ गम्भीरता आई नहीं, वहीं मूकता भी आयेगी ही। प्रेम जब गहन होगा, तो शब्द व्यर्थ होंगे ही। यदि व्यर्थ न कहें, तो भी वे अपनी अर्थवत्ता को उस प्रकार प्रकट नहीं कर पायेंगे, जिस प्रकार से प्रेमी उन्हें व्यक्त करना चाहता है और तब नयन ही वाणी बन जाते हैं, तब अश्रु ही प्रवाह बन जाते हैं, कर स्वत: ही आबद्ध हो जाते हैं और क्या यही दशा 'अनाहत चक्र' की अर्थात् अन+आहट, नि:शब्दता की नहीं होती? इससे सुन्दर, इससे ज्यादा श्रेष्ठ ढंग से भला कौन अनाहत आज तक जाग्रत हुआ है? यही तो हृदय का भी स्थान है। कुण्डलिनी में हृदय का जागरण ही सर्वोच्च नहीं, तो और सर्वोच्च हो भी क्या सकता है?

जो प्रेम के मार्ग से बढ़ता हुआ इस प्रकार अनाहत चक्र को 'जाग्रत' कर ले गया, फिर उसके लिए मानो कुछ शेष रह ही नहीं जाता। उसे तो अपना अभीष्ट मिल ही चुका होता है, लेकिन गुरु तो गुरु ही होते हैं, उनकी क्रिया यहीं समाप्त नहीं होती। शिष्य के मौन होने से वह मौन तो नहीं हो सकते। वह फिर भी उसे गढ़ते ही रहते हैं, उसका परीक्षण और निरीक्षण करते ही रहते हैं, कि कहीं ऐसी दशा प्राप्त उनके शिष्य में इस बात का अहं न आ जाये और जिसमें अपनी दशा को ले कर बोध न रह गया, मानो ऐसे ही साधक का 'विशुद्ध चक्र' वास्तव में जाग्रत हुआ है। जिसमें अहं का मल न रह गया, जिसके चित्त की तलहटी में छुप कर दंभ न जमा रह गया, वही तो विशुद्ध चक्र की दशा में स्थित कहा जा सकता है, अन्यथा नेति-धौती से कुण्डलिनी 'जगाने' वाले तो पथभ्रष्ट होते देखे ही गए हैं।

वस्तुत: कुण्डलिनी 'जगाई' जाती ही नहीं, वह तो भाव यात्रा होती है और चाहे हठयोग हो अथवा राजयोग, किसी भी प्रकार से कुण्डलिनी जाग्रत करनी ही पड़ती है या यों कहूं तो अधिक उपयुक्त रहेगा, कि सद्गुरु अपने योग्य शिष्य के साथ स्वत: ही कभी न कभी (प्राय: उसके ज्ञान में लाये बिना ही) ऐसा सब कुछ घटित कर देते हैं।

ऐसे विशुद्ध साधक ही तो गुरु के यथार्थ यंत्र बन सकते हैं।

दंभ समाप्त हुए बिना भला आज तक कौन प्रकृति को अपना अनुचर बनाने की भावना पर नियंत्रण कर सका है? लेकिन पूर्णता और जीवन्मुक्ति तो प्रकृति को सहचरी बना

योग जगत में भी तो गुरु से तभी साक्षात् सम्भव हो सकता है, जब हम अपनी नाभि या अपने मणिपुर या अपने 'स्व' को उनसे जोड़ दें। योगी इसको नेति-धौति के माध्यम से जोड़ने का प्रयास करता है, लेकिन प्रेम पक्ष के यात्री को 'स्व' का इतना भान ही कहाँ, कि वह ऐसा कुछ कर सके। हो गया तब भी ठीक, नहीं हुआ तब भी उसे इसकी चिंता नहीं रहती... और गुरु स्वयं ही मातृ स्वरूप में अपनी नाभि से उसकी नाभि का सम्पर्क इस प्रकार कर लेते हैं, जिस प्रकार माता अपने उदरस्थ शिशु का करती है।

कर ही सम्भव है। वे योगी, जो प्रकृति पर शासन भी कर ले और जीवन्मुक्त भी रहे, वे केवल महायोगी ही होते हैं, एक प्रकार से स्वयं सद्‌गुरु ही होते हैं।

सामान्य साधक का कल्याण तो प्रकृति को सहचरी बना कर ही सम्भव है और जो साधक इस प्रकार से प्रकृति के कटाक्षों को समझने लगता है, एक प्रकार से उसकी 'आज्ञा' पर चलने लगता है, वही तो आज्ञा चक्र पर चलने लगता है, वही तो आज्ञा चक्र तक पहुंचा व्यक्तित्व कहला सकता है।

हठयोग आदि के माध्यम से आज्ञा चक्र तक पहुँचा साधक प्रकृति पर नियंत्रण प्राप्त करने को तत्पर रहता है, लेकिन प्रेम के मार्ग से बढ़ता हुआ साधक प्रकृति के संकेत को समझ कर पूर्ण करने में अधिक तत्पर होता है, यही मूलभूत अंतर है।

दोनों में कौन श्रेष्ठ है, यह एक पृथक विवेचना का विषय हो सकता है, लेकिन जो प्रेम के मार्ग से आगे बढ़ रहा है, वही सहस्रार का अधिकारी हो सकता है। 'सहस्रार' का अर्थ ही है सहस्र बिंदु और जीवन में सहस्र बिन्दुओं का अर्थ है सहस्र व्यक्तियों से उन्मुख हो जाना, अपार करुणा से युक्त हो जाना, एक प्रकार से जो कुछ अर्जित किया है, उसे औघड़दानी शिव की भांति लुटा देने को तत्पर हो जाना।

शास्त्रों में जाग्रत सहस्रार की तुलना एक सहस्र पंखुड़ियों वाले ऐसे कमल दल से की गई है, जो कि अपने उल्टे स्वरूप में साधक के मस्तिष्क में अवस्थित है और जिसमें से बूंद-बूंद कर अमृत टपक रहा होता है, जो साधक को अजर, अमर, निरोगी व सुखी बनाने में समर्थ होता है।

सद्‌गुरु जो शिष्य प्रस्तुत करते हैं, उसका सहस्रार जाग्रत होता है, लेकिन वह केवल मस्तिष्क से ही नहीं, अपितु अपने सम्पूर्ण स्वरूप से ऐसा बन जाता है, जो उल्टे कमल की भांति होता है अर्थात् उसका कण-कण पुन: समाज को अमृत प्रदान करने की क्रिया करता है।

वस्तुत: इस प्रकार से पूर्ण रूप से जाग्रत सहस्रार वाले तो स्वयं सद्‌गुरु या शिव ही होते हैं, किन्तु एक उपमा के रूप में मैंने यहाँ कहने का प्रयास किया है, कि यथार्थत: साधक को सहस्रार जागरण से क्या भाव रखना चाहिए... और प्रेम के माध्यम से कुण्डलिनी जागरण के पथ पर बढ़ते हुए साधक के लिए यह स्थिति कोई असम्भव भी नहीं! 'गुरु' का आगमन ही ऐसे प्रेम-पथ पर ले जाने के लिए होता है एक सहज समाधि देने के लिए होता है–

इस दुनिया ही में है
सुने इक दुनिया-ए-मुहब्बत भी
हम भी उस जानिब जाते हैं,
बोलो तुम भी आये हो।

कुण्डलिनी साधना

गुरु की अन्यतम कृपा हो जाय, तो वे साधक को कुण्डलिनी जागरण की साधना प्रदान करते हैं। कुण्डलिनी जागरण का अर्थ है–साधक या शिष्य शनै:-शनै: लक्ष्य की पूर्णता की ओर अग्रसर हो जाता है और उस परम तत्त्व से साक्षात्कार कर लेता है।

यह साधना प्रात:कालीन है, साधक को चाहिए कि वह ब्रह्म मुहूर्त में स्नानादि कर श्वेत वस्त्र धारण कर यह साधना आरम्भ करें।

इस साधना को संन्यास जयन्ती 26.06.21 से या किसी भी रविवार से आरम्भ करें। यह दो दिन की साधना है। साधना से पूर्व साधक कुछ देर तक प्राणायाम का अभ्यास करें।

लकड़ी के बाजोट पर लाल रंग का वस्त्र बिछाएं, उस पर छ: पुष्प एक लाइन में रखें, चौथे पुष्प पर कुण्डलिनी यंत्र का स्थापन करें।

यंत्र पर कुंकुम, अक्षत तथा पुष्प चढायें। घी का दीपक प्रज्वलित करें।

गुरुदेव का ध्यान करें–

आदोवदानं परमं सदेहं
प्राण प्रमेयम् परसंप्रभूतं
पुरुषोत्मां पूर्ण मदैव रूपं
निखिलेश्वरोयं प्रणमं नमामि

गुरु चित्र के समक्ष पुष्प चढ़ायें।

कुण्डलिनी माला से निम्न मंत्र का नित्य 51 माला जप करें।

मंत्र

।। ॐ ह्रीं कुल कुण्डलिन्यै फट्।।

OM HREEM KUL KUNDALINYAI PHAT

मंत्र जप समाप्त होने के पश्चात माला को यंत्र के ऊपर रख दें। दूसरे दिन भी इसी प्रकार से मंत्र जप करे।

प्रयोग समाप्त होने पर माला को धारण कर लें तथा सवा महीने तक प्रात:काल प्राणायाम करने के उपरान्त यंत्र को देखते हुए नित्य 108 बार उपरोक्त मंत्र का जप करें।

सवा महीने बाद यंत्र तथा माला नदी में प्रवाहित कर दें।

न्यौछावर- 450/-

दृष्टिकोण

एक राजा बहुत दिनों से विचार कर रहा था कि अब वह राजपाट छोड़कर अपना जीवन ईश्वर आराधना में लगाए। परन्तु चिंतित था कि राज कार्य किसे सौंपे। बहुत सोचने के बाद उसने अपने गुरु को अपनी चिंता बताते हुए कहा कि उसे कोई योग्य वारिस नहीं मिल रहा जबकि मैं अब अपना जीवन ईश्वर आराधना में लगाना चाहता हूँ, कोई ऐसा हो जिसमें राज्य संभालने के सारे गुण हो तो मैं शेष जीवन अध्यात्म के मार्ग पर समर्पित करना चाहता हूँ।

गुरुदेव ने उसकी बात ध्यान से सुनी और बोले, कि राज्य की बागड़ोर मेरे हाथों में क्यों नहीं दे देते ? क्या तुम्हें मुझसे ज्यादा सक्षम पात्र कोई अन्य मिल सकता है?

राजा ने कहा – गुरुदेव, राज्य को आपसे ज्यादा अच्छी तरह भला कौन संभाल सकता है, मैं इसी समय राज्य की बागड़ोर आपके हाथों में सौंपता हूँ।

गुरु ने कहा – ठीक है, अब यह बताओ, अब तुम क्या करोगे ?

राजा बोला – मैं राज्य के खजाने से थोड़े पैसे ले लूंगा जिससे मेरा बाकी का जीवन निर्वाह हो जाए।

गुरु बोले – मगर अब राज्य एवं खजाने का मालिक मैं हूँ और मैं तुम्हें एक भी पैसा नहीं दूंगा।

राजा बोला, ठीक है मैं जीवन निर्वाह के लिए कोई छोटी नौकरी कर लूंगा और उससे गुजारा कर लूंगा।

गुरु ने कहा, अगर तुम्हें कार्य ही करना है तो मेरे पास तुम्हारे लिए एक नौकरी है, क्या तुम मेरे यहां नौकरी करोगे?

राजा बोला – मैं करने के लिए तैयार हूँ।

गुरु ने कहा – ठीक है, तो तुम्हें मैं आज से मेरे राज्य को व्यवस्थित ढंग से चलाने की नौकरी देता हूँ मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे यहाँ नौकरी करो और बाकी समय में निश्चिन्त होकर भगवत स्मरण में एकाग्रता के साथ अपने समय का सदुपयोग करो। हर माह तुम्हें राज्य के खजाने से इस कार्य के लिए तनख्वाह दी जायेगी।

राजा ने अपने गुरु की आज्ञा सहर्ष स्वीकार कर ली और पूर्ण निष्ठा से अपने गुरु के द्वारा सौंपे कार्य को करने लगा।

एक वर्ष बाद गुरु ने वापस लौटकर देखा कि राजा बहुत खुश था। अब दोनों ही कार्य सुगमता से हो रहे थे। जिस अध्यात्म के लिए वह राजपाट छोड़ना चाहता था, वह भी चल रहा था और राज्य का कार्य भी चल रहा था। अब उसे किसी प्रकार की चिंता ही नहीं थी।

इस द्रष्टांत से समझा जा सकता है कि वास्तव में परिवर्तन क्या हुआ ? कुछ भी तो नहीं। राज्य वही, राजा वही, कार्य वही, बस द्रष्टिकोण बदल गया।

सद्गुरुदेव ने यही बात बार-बार समझायी कि इस संसार में मालिक बनकर नहीं बल्कि यह सोचकर सारे कार्य करें कि मुझे ईश्वर ने ड्यूटी सौंपी है और मैं भगवान के द्वारा दिये गये कार्य को एक नौकरी के रुप में कर रहा हूँ अब बाकी ईश्वर जाने। सब उसी भगवान पर छोड़ दें।

हम नित्य समर्पण स्तुति तो करते हैं कि – अब सौंप दिया इस जीवन का सब भार तुम्हारे हाथों में....

परन्तु स्वयं विचार करें क्या यथार्थ में यह सत्य है ? क्या इसे जीवन में उतार सके हैं? यदि हम साधना करने के साथ-साथ प्रत्येक सांसारिक कार्य को भगवान द्वारा दी गई ड्यूटी मान कर निःस्वार्थ भाव से पूर्ण निष्ठा विश्वास के साथ बगैर किसी अहंकार, भेदभाव या द्वेष के निभायेंगे तो उसका फल सद्गुरुदेव हमें अवश्य ही प्रदान करेंगे।

▪ राजेश गुप्ता 'निखिल'
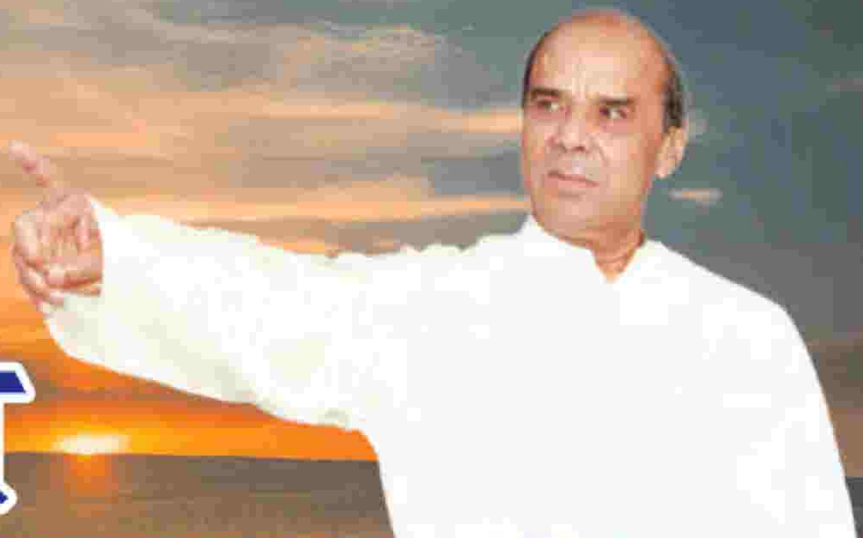
मेष-माह का प्रारम्भ खुशनुमा रहेगा, नये मकान में प्रवेश का समय है। मनोकामना पूर्ण होगी। किसी भी कार्य में लापरवाही न बरतें। वाहन चलाने में सावधानी रखें। ब्लड प्रेशर से तबियत बिगड़ सकती है। अचानक किसी पुराने मित्र से मुलाकात होगी। तीर्थ स्थान की यात्रा हो सकती है। प्यार के मामले में सावधान रहें। गलत सोहबत से दूर रहें। माह के मध्य में मानसिक संतोष रहेगा। पुत्र व्यापार में सहयोग करेगा। रुके हुये रुपये वसूल होंगे। चलते-फिरते अनजान से वाद-विवाद हो सकता है। जिससे अशांति पैदा होगी। जल्दबाजी के चक्कर में हानि उठानी पड़ सकती है। क्रोध से बचें, चिड़चिड़ापन नुकसान पहुंचायेगा। पति-पत्नी में गलतफहमियां दूर होगी। समझदारी से समस्यायें सुलझाने में सक्षम होंगे। इस माह आप पूर्ण गृहस्थ सुख दीक्षा प्राप्त करें।

शुभ तिथियाँ-8, 9, 10, 18, 19, 20, 26, 27, 28

वृष-माह का प्रारम्भ सफलतादायक रहेगा। बेरोजगारों को रोजगार मिलने के आसार हैं। अदालती चक्करों से छुटकारा मिलेगा। परिवार में वाद-विवाद हो सकता है। किसी मुसीबत में फंस सकते हैं। किसी और की गलती आप पर आ सकती है। कोई अशुभ समाचार परेशानी में डाल सकता है। कोई छिपी बात उजागर हो जायेगी। व्यापार में पुत्र का पूर्ण सहयोग मिलेगा। प्यार में सफलता चित्त में प्रसन्नता देगी। सरकारी कर्मचारियों की पदोन्नति के अवसर हैं। तीसरे सप्ताह में कोई अशुभ समाचार मानसिक परेशानियां बढ़ायेगा। भाइयों से मतभेद दूर होकर प्यार का वातावरण बनेगा। स्वास्थ्य का ध्यान रखें। व्यापार में नुकसान उठाना पड़ सकता है। यह समय कठोर परिश्रम का है। कर्मचारियों को उच्च अधिकारियों का सहयोग मिलेगा। मित्रों की मदद लेकर बाधाएं दूर कर सकेंगे। आप इस माह बगलामुखी दीक्षा प्राप्त करें।

शुभ तिथियाँ-1, 2, 3, 11, 12, 20, 21, 28, 29, 30

मिथुन-माह का प्रारम्भ सफलतादायक है। अचानक कोई लाभ का सौदा हो सकता है। परिवार के साथ बाहर घूमने का प्रोग्राम बन सकता है। अविवाहितों का विवाह सम्भव है। आपका कोई सामान खोने से चिन्तित रहेंगे। परिवार में तनाव का वातावरण रहेगा। छोटी-छोटी बातों पर झगड़े नहीं, वाणी पर नियंत्रण रखें वरना परेशानी बढ़ सकती है। रास्ते में परेशानियों के बाद भी आप सफल होंगे। आप सच्चाई के रास्ते पर चलेंगे। विरोधियों को जवाब देने में सक्षम होंगे। स्वास्थ्य के प्रति सावधानी रखें। यात्रा में कष्ट हो सकता है, ज्यादा जोखिम उठाने से बचें हानि पहुंच सकती है। साझेदारी के कार्य में हानि की सम्भावना है, मन में उच्चाटन रहेगा। जीवनसाथी का सहयोग मिलेगा आप कोईभी लक्ष्मी साधना सम्पन्न करें।

शुभ तिथियाँ-3, 4, 5, 13, 14, 15, 22, 23, 24

कर्क-माह के प्रारम्भ में परेशानियां आयेंगी। शत्रु पक्ष हानि पहुंचाने की कोशिश करेंगे। परिवार का साथ नहीं मिलेगा। अदालती कार्यों से छुटकारा सम्भव है। मान-प्रतिष्ठा बढ़ेगी। कार्य के सिलसिले में यात्रा होगी। कहीं से कोई अप्रिय समाचार मिल सकता है, अपनों से वांछित सहयोग नहीं मिलेगा। कोई अपना ही धोखा देगा। आय के साधन बढ़ेंगे। भावी योजना बनाने में सफल होंगे। लोगों की सहायता करेंगे। आर्थिक स्रोतों में सुधार होगा। तीसरे सप्ताह में दाम्पत्य जीवन में मनमुटाव रहेगा। घर में अशांति रहेगी। अटके हुए रुपये प्राप्त होंगे। आप सच्चाई के रास्ते पर चलकर सफलता प्राप्त कर लेंगे।आर्थिक स्थिति मजबूत होगी। नौकरीपेशा लोगों की पदोन्नति होगी एवं आमदनी में वृद्धि होगी। कोई बड़ा ऑर्डर मिल सकता है। क्रोध पर नियंत्रण रखें। नवग्रह मुद्रिका धारण करें।

शुभ तिथियाँ-6, 7, 8, 16, 17, 24, 25, 26

सिंह-सप्ताह का प्रारम्भ सफलतादायक रहेगा। सभी से मधुर सम्बन्ध होंगे। यात्रा से लाभ होगा। विद्यार्थी वर्ग अच्छा परिणाम पाकर प्रसन्न होगा। आर्थिक स्थिति सामान्य रहेगी। इस समय कोई निर्णय सोच-समझकर लें। अचानक धन की प्राप्ति हो सकती है। जीवनसाथी से प्रसन्नता प्राप्त होगी। अपने स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दें। कोई महत्वपूर्ण कार्य बीच में अटक जायेगा। आशा-निराशा में बदल जायेगी। स्तर को ऊँचा उठाने के लिए परिश्रम व मेहनत पर लगे रहेंगे। महत्वपूर्ण कार्य पूर्ण कर सकेंगे। धार्मिक कार्यों में रुचि लेंगे। चलते-फिरते किसी से वाद-विवाद से परेशानी में पड़ सकते हैं। क्रोध पर नियंत्रण रखें। किसी और की गलती आपको भुगतनी पड़ सकती है। शत्रु वर्ग आप पर हावी रहेगा। किसी उच्च अधिकारी के सहयोग से कार्य पूरा कर सकेंगे, परिवार में प्रसन्नता का वातावरण रहेगा। आप गुरु हृदय धारण दीक्षा प्राप्त करें।

शुभ तिथियाँ-8, 9, 10, 18, 19, 20, 26, 27, 28

कन्या-माह का प्रारम्भ अनुकूलता लायेगा। परिवार में सुख, सद्भावना बनी रहेगी। कठिनाइयों से मुकाबला करके आगे बढ़ेंगे। राजनीतिज्ञों से भी अच्छे सम्बन्ध बनेंगे। विद्यार्थियों को मन चाहा रिजल्ट मिलने से खुशी मिलेगी। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें। जीवनसाथी से खटपट हो सकती

है। कुछ महत्वपूर्ण कार्यों में रुकावट आयेगी। व्यापार के सिलसिले में की गई यात्रा लाभ देगी। अचानक धन लाभ हो सकता है, कोई नई वस्तु की खरीदारी होगी। तीसरे सप्ताह में किसी से रास्ते में वाद-विवाद हो सकता है, क्रोध पर नियंत्रण रखें। अन्यथा मामला बिगड़ सकता है। आपके परिश्रम एवं कड़ी मेहनत से आर्थिक उन्नति होगी। प्यार में सफलता के अवसर हैं। आर्थिक लेन-देन में सतर्कता बरतें। नया कारोबार इस समय शुरू न करें। शत्रु वर्ग परास्त होंगे। आप इस माह कायाकल्प दीक्षा प्राप्त करें।

शुभ तिथियाँ-1, 2, 3, 11, 12, 20, 21, 22, 28, 29

तुला-माह का प्रारम्भ उत्साहवर्धक है। धार्मिक कार्यों में रुचि रहेगी। गरीबों की सहायता करेंगे। कठिन कार्यों को भी तत्परता से सुलझायेंगे। रुके कार्यों में सुधार होगा। शरीर में उत्साह का संचार होगा। दूसरे सप्ताह में कोई भी कार्य सोच-विचार कर करें। गलत सोहबत के लोगों से दूर रहें। जमीन-जायदाद के कारण वाद-विवाद हो सकता है। रुपये-पैसे की कमी रहेगी। शत्रु वर्ग परास्त होंगे। विदेश यात्रा हो सकती है। कोर्ट के मामले अनुकूल रहेंगे। मधुर वाणी से जन समर्थन मिलेगा। आर्थिक स्थिति सामान्य रहेगी। संतान पक्ष आपको अच्छा सहयोग करेगी। कोई भी कार्य सोच-विचार कर ही करें। समाज में प्रतिष्ठा मिलेगी। जीवनसाथी का सहयोग मिलेगा। माह के अन्त में भाग्योदय का समय है, यथेष्ट धन प्राप्ति से स्थिति में सुधार होगा। आप भाग्योदय दीक्षा प्राप्त करें।

शुभ तिथियाँ-3, 4, 5, 13, 14, 15, 22, 23, 24

वृश्चिक-माह का प्रारम्भ प्रतिकूल है। व्यापारिक या किसी भी कार्य में सावधानी रखें। जल्दबाजी में कोई भी निर्णय न लें। वाणी पर संयम रखें नहीं तो कोई समस्या आ सकती है। आर्थिक स्थिति में सुधार होगा। परिवार में खुशहाली का माहौल बनेगा। बिना पढ़े किसी महत्वपूर्ण पेपर पर हस्ताक्षर न करें। किसी और की गड़बड़ी स्वयं को भुगतनी पड़ सकती है। माह के मध्य में किसी अनजान से टकराहट हो सकती है। कार्य के सिलसिले में मीटिंग सार्थक होगी। नया वाहन खरीदने का योग है। प्यार में सफलता मिलेगी। विद्यार्थी वर्ग का समय पढ़ाई में बीतेगा। घर-परिवार में वातावरण शान्तिपूर्ण होगा। अचानक कोई अशुभ समाचार मिल सकता है। अचानक लम्बी दूरी की यात्रा का प्रोग्राम बन सकता है। स्वास्थ्य ठीक नहीं रहेगा। परिवार में खर्चे रहेंगे। आप इस माह पत्रिका से हनुमत कल्प साधना करें।

शुभ तिथियाँ- 6, 7, 8, 16, 17, 24, 25, 26

धनु-सप्ताह का प्रारम्भ शुभकारी रहेगा।घर में कोई बड़ी खरीददारी हो सकती है। परन्तु बाद का समय परेशानी भरा रहेगा, आर्थिक स्थिति डांवाडोल रहेगी, प्रतिष्ठा में ठेस लगेगी। नौकरीपेशा लोगों की तरक्की का अवसर हैं। दाम्पत्य जीवन सुखमय रहेगा। विद्यार्थी वर्ग अच्छा परिणाम मिलने से प्रसन्न रहेगा। कहीं से धन की प्राप्ति हो सकती है। आप अपनी बुद्धि-विवेक से समस्या सुलझा लेंगे। माह के मध्य में कोई बनाई गई योजना अटक जायेगी। टेंशन बढ़ेगी, सोच-समझकर कार्य करें। जीवनसाथी का पूर्ण सहयोग मिलेगा। गरीबों की सहायता करेंगे। किसी की तबियत खराब होने से परेशान रहेंगे, आखिरी सप्ताह में कोई अशुभ समाचार मिल सकता है, जिससे उदासी का वातावरण रहेगा। शत्रुओं का डटकर मुकाबला करेंगे, आत्मविश्वास बढ़ेगा। आप नवग्रह मुद्रिका धारण करें।

शुभ तिथियाँ-8, 9, 10, 18, 19, 20, 26, 27, 28

मकर-प्रारम्भ के कुछ दिन विजय सूचक है। कोर्ट के मामले सुलझ सकते हैं। मानसिक परेशानी से मुक्ति मिलेगी, यात्रा लाभकारी होगी। रास्ते में कांटे होने पर भी सफलता पा लेंगे। नौकरीपेशा लोगों को ऑफिस में किसी और की गलती को भुगतना पड़ सकता है। अचानक कोई नुकसान हो सकता है। आर्थिक स्थिति ठीक नहीं रहेगी। जीवनसाथी का व्यापार में सहयोग मिलेगा। व्यापार में नुकसान की संभावना है। सोच-समझकर निर्णय लें। अधिकारी वर्ग सन्तुष्ट नहीं रहेगा। रुपयों की वसूली होगी। बैंक से ऋण प्राप्त हो सकता है, जिससे आर्थिक परेशानी में सहायता मिलेगी। आखिरी सप्ताह में स्वास्थ्य का ख्याल रखें। क्रोध पर नियंत्रण रखें अन्यथा नुकसान हो सकता है। कर्मचारी वर्ग को मनचाहा ट्रांसफर खुशी दे सकता है। पारिवार में खुशी का माहौल रहेगा, आप सर्वबाधा निवारण दीक्षा प्राप्त करें।

शुभ तिथियाँ- 1, 2, 3, 11, 12, 13, 20, 21, 22, 29, 30

कुम्भ-माह का प्रथम सप्ताह संतोषप्रद रहेगा। गरीबों की सहायता करेंगे। व्यापार में प्रगति होगी, नौकरीपेशा लोगों की भी प्रगति के अवसर हैं। कहीं से रुके हुये रुपये प्राप्त होंगे। जमीन-जायदाद के मामले भाइयों से सरलता से सुलझ जायेंगे। अविवाहितों का विवाह सम्भव है। शेयर या सट्टे के कार्य में लालच में न पड़ें, नुकसान हो सकता है। माह के मध्य में अपनों से सम्बन्धों में खटास आ सकती है। कोई अशुभ समाचार भी मिल सकता है। आप निश्चय के साथ अपने लक्ष्य को पूरा करने में लगे रहेंगे। शत्रु गण शांत रहेंगे। दाम्पत्य जीवन सुखमय रहेगा। आप व्यवस्थित ढंग से कार्य करते हैं। इस समय स्वास्थ्य ठीक नहीं रहेगा। मान-प्रतिष्ठा में ठेस लग सकती है। कोई अच्छी खबर भी मिल सकती है। क्रोध पर काबू रखें। विरोधी परास्त होंगे। आप गुरु हृदयस्थ धारण दीक्षा प्राप्त करें।

शुभ तिथियाँ-3, 4, 5, 13, 14, 15, 22, 23, 24

मीन-माह का प्रारम्भ चिंतनकारी है। किसी और के कहने से लड़ाई-झगड़े की स्थिति पैदा कर लेंगे। आपको धोखा मिल सकता है। गृहस्थ जीवन सुखमय रहेगा। विद्यार्थी वर्ग के लिए समय उन्नतिदायक है। सच्चाई के रास्ते पर चलकर मुसीबत झेलते हुये जीत हासिल करेंगे। बुद्धि, विवेक से समस्याओं का समाधान करेंगे। मनचाहा रोजगार मिलने से चित्त प्रसन्न रहेगा। नौकरीपेशा लोगों का ट्रांसफर मनचाहा न होने से परेशान रहेंगे। प्यार में सफलता मिलेगी। राह चलते किसी से वाद-विवाद से बचें। बिना सोचे-समझे कोई कर्म न करें, बदनामी भी हो सकती है। आय के नवीन स्रोत बनेंगे। लाटरी, सट्टे से दूर रहें। किसी भी पेपर पर बिना पढ़े हस्ताक्षर न करें। आत्मविश्वास कमजोर रहेगा। आप इस माह भैरव दीक्षा प्राप्त करें।

शुभ तिथियाँ- 6, 7, 8, 16, 17, 24, 25, 26

सर्वार्थ सिद्धि योग -	जून- 6, 7, 8, 9, 14, 15, 23,
रवि योग -	जून - 14, 16, 19, 20
रवि पुष्य योग-	जून - 13 (शाम 7.01 से 14 जून प्रात: 5.50 तक)

इस मास व्रत, पर्व एवं त्यौहार

06.06.21	रविवार	अपरा एकादशी
09.06.21	बुधवार	वट सावित्री व्रत
10.06.21	गुरुवार	शनि जयंती
16.06.21	बुधवार	विंध्यवासिनी दिवस
18.06.21	शुक्रवार	धूमावती जयंती
21.06.21	सोमवार	निर्जला एकादशी
24.06.21	गुरुवार	वट सावित्री व्रत ज्येष्ठ पूर्णिमा
26.06.21	शनिवार	संन्यास जयंती

साधक, पाठक तथा सर्वजन सामान्य के लिए समय का वह रूप यहां प्रस्तुत है; जो किसी भी व्यक्ति के जीवन में उन्नति का कारण होता है तथा जिसे जान कर आप स्वयं अपने लिए उन्नति का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं।

नीचे दी गई सारिणी में समय को श्रेष्ठ रूप में प्रस्तुत किया गया है - जीवन के लिए आवश्यक किसी भी कार्य के लिये, चाहे वह व्यापार से सम्बन्धित हो, नौकरी से सम्बन्धित हो, घर में शुभ उत्सव से सम्बन्धित हो अथवा अन्य किसी भी कार्य से सम्बन्धित हो, आप इस श्रेष्ठतम समय का उपयोग कर सकते हैं और सफलता का प्रतिशत **99.9%** आपके भाग्य में अंकित हो जायेगा।

ब्रह्म मुहूर्त का समय प्रातः 4.24 से 6.00 बजे तक ही रहता है

वार/दिनांक	श्रेष्ठ समय
रविवार (जून-6, 13, 20, 27)	दिन 06.00 से 08.24 तक 11.36 से 02.48 तक 03.36 से 04.24 तक रात 06.48 से 10.00 तक 12.24 से 02.48 तक 04.24 से 06.00 तक
सोमवार (जून-7, 14, 21, 28)	दिन 06.00 से 07.36 तक 09.12 से 11.36 तक रात 08.24 से 11.36 तक 02.48 से 03.36 तक
मंगलवार (जून-1, 8, 15, 22, 29)	दिन 10.00 से 11.36 तक 04.30 से 06.00 तक रात 06.48 से 10.00 तक 12.24 से 02.48 तक 05.12 से 06.00 तक
बुधवार (जून-2, 9, 16, 23, 30)	दिन 06.48 से 10.00 तक 02.48 से 05.12 तक रात 07.36 से 09.12 तक 12.24 से 02.48 तक
गुरूवार (जून-3, 10, 17, 24)	दिन 06.00 से 07.36 तक 10.00 से 11.36 तक 04.24 से 06.00 तक रात 09.12 से 11.36 तक 02.00 से 04.24 तक
शुक्रवार (जून-4, 11, 18, 25)	दिन 06.00 से 06.48 तक 07.36 से 10.00 तक 12.24 से 03.36 तक रात 07.36 से 09.12 तक 10.48 से 11.36 तक 01.12 से 02.48 तक
शनिवार (जून-5, 12, 19, 26)	दिन 06.00 से 06.48 तक 10.30 से 12.24 तक रात 08.24 से 10.48 तक 02.48 से 03.36 तक 05.12 से 06.00 तक

यह हमने नहीं वराहमिहिर ने कहा है

किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व प्रत्येक व्यक्ति के मन में संशय-असंशय की भावना रहती है कि यह कार्य सफल होगा या नहीं, सफलता प्राप्त होगी या नहीं, बाधाएं तो उपस्थित नहीं हो जायेंगी, पता नहीं दिन का प्रारम्भ किस प्रकार से होगा, दिन की समाप्ति पर वह स्वयं को तनावरहित कर पायेगा या नहीं? प्रत्येक व्यक्ति कुछ ऐसे उपाय अपने जीवन में अपनाना चाहता है, जिनसे उसका प्रत्येक दिन उसके अनुकूल एवं आनन्दयुक्त बन जाय। कुछ ऐसे ही उपाय आपके समक्ष प्रस्तुत हैं, जो वराहमिहिर के विविध प्रकाशित-अप्रकाशित ग्रंथों से संकलित हैं, जिन्हें यहां प्रत्येक दिवस के अनुसार प्रस्तुत किया गया है तथा जिन्हें सम्पन्न करने पर आपका पूरा दिन पूर्ण सफलतादायक बन सकेगा।

जून 21

11. पूजन के बाद मां दुर्गा की आरती करें।
12. थोड़ा सा आटा चींटियों को डालें।
13. माँ पार्वती के मन्दिर में दीपक जलायें। परिवार की सुख-समृद्धि की कामना करें।
14. आज पारद शिवलिंग पर जल से अभिषेक करें।
15. हनुमान चालीसा का एक पाठ करके जाएं।
16. आज निम्न मंत्र का 21 बार उच्चारण करके जाएं। मंत्र - ।। ह्रीं ।।
17. प्रातः स्नान कर पीपल के पेड़ में 1 लोटा जल चढ़ायें।
18. आज धूमावती जयंती है, पत्रिका में प्रकाशित साधना करें।
19. आज काली उड़द दाल दक्षिणा के साथ दान करें।
20. मई पत्रिका में प्रकाशित गंगा स्तोत्र का एक पाठ करें।
21. आज सद्गुरुदेव जन्म दिवस पर गुरु गीता का एक पाठ करें।
22. प्रातः किसी गरीब को भोजन करायें।
23. आज पत्रिका में प्रकाशित लक्ष्मी साधना कर सकते हैं।
24. सुबह 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' का 11 बार उच्चारण करके जाएं।
25. धूमावती गुटिका (न्यौ. 150/-) धारण करें।
26. किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व 11 बार गुरु मंत्र करें।
27. आज गणेश जी के मन्दिर में लड्डू का भोग लगाएं।
28. 'ॐ नमः शिवाय' मंत्र का 11 बार उच्चारण करके जाएं।
29. हनुमान जी के मन्दिर में बेसन के लड्डूओं का भोग लगाकर बच्चों में प्रसाद बांटें।
30. आज माँ लक्ष्मी के समक्ष घी का दीपक लगाएं।

जुलाई 21

1. आज गुरु गुटिका (न्यौ. 150/-) धारण करें। साधना में सफलता मिलेगी।
2. देवी मन्दिर में तीन लाल पुष्प अर्पित करें।
3. आज सिद्धाश्रम जयंती पर पत्रिका में प्रकाशित साधना करें।
4. भगवान सूर्य को अर्घ्य दें।
5. आज पत्रिका में प्रकाशित योगिनी साधना करें।
6. आज हनुमान बाहु (न्यौ. 90/-) धारण करें, बाधाओं से मुक्ति मिलेगी।
7. सुबह 'ह्रीं' बीज मंत्र का 21 बार उच्चारण करके जाएं।
8. प्रातः पूजन के बाद 'ॐ' का 11 बार दीर्घ गुंजरण करें।
9. किसी ब्राह्मण को दाल-चावल एवं दक्षिणा दान में दें।
10. आज 'दुर्लभोपनिषद' सी.डी. का श्रवण करें।

केतु सिद्धि दिवस के अवसर पर

18.07.21

धर्मराज यमराज नमो नमः

मृत्यु के अधिपति यमराज को धर्मराज भी कहा जाता है क्योंकि

रोग, शोक, दुःख, भय, पीड़ा और मृत्यु

का धर्म के अनुसार निर्णय करने वाले प्रधान यमराज ही हैं,

इन्हीं विपदाओं के रहते कोई भी व्यक्ति अपने जीवन में पूर्ण उन्नति की ओर अग्रसर नहीं हो सकता है, मानसिक बाधा के प्रभाव स्वरूप उसके जीवन की शक्तियों का ह्रास होता है,

अतः जहां देवताओं का पूजन मनन आवश्यक है, वहीं धर्मराज यमराज की पूजा भी अत्यन्त आवश्यक है।
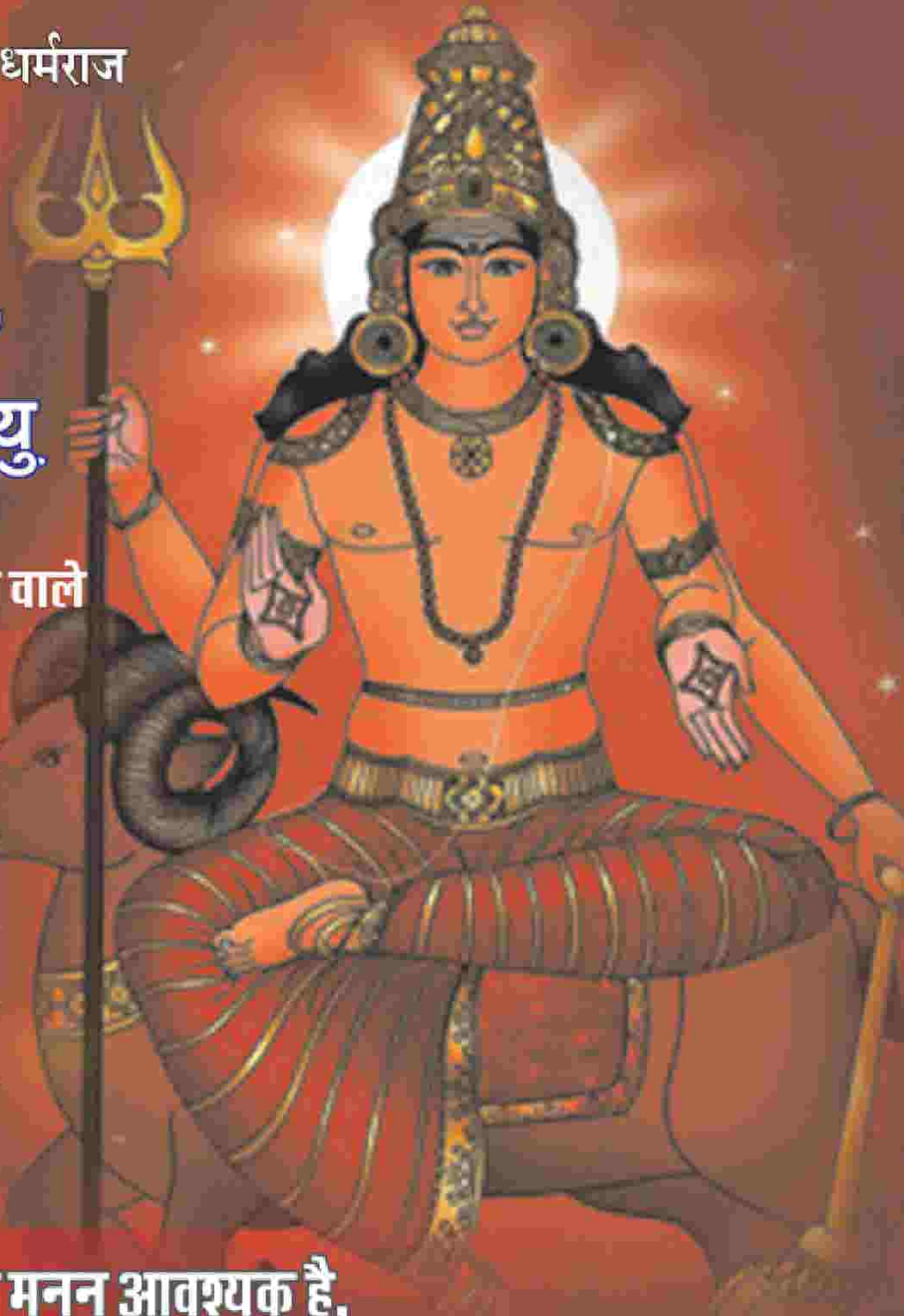
धर्मराज सिद्धि प्रयोग

रोग, शोक का मूल कारण मनुष्य के कर्म हैं और उनका निर्णय करने का अधिकार केवल धर्मराज यमराज को ही है अतः धर्मराज यमराज की पूजा एवं साधना करने से मनुष्य को शरीर, मन, कार्य की दृष्टि से पूर्णता प्राप्त होती है, विभिन्न रोग पूर्ण नियंत्रण में रहते हैं।

विभिन्न प्रकार के शारीरिक मानसिक तथा दैहिक रोगों की उत्पत्ति का कारण व्यक्ति द्वारा किये गये उसके पूर्व जन्म के कर्म तथा वर्तमान जन्म के कर्म प्रधान रहते हैं, वर्तमान जन्म के कर्म पर तो नियन्त्रण किया जा सकता है, लेकिन पूर्व जन्म में किये गये कर्मों के कारण इस जन्म में जो दुर्भाग्य, बाधा, पीड़ा झेलनी पड़ती है उस पर नियन्त्रण कैसे किया जाय ?

'मन्त्र महोदधि' ग्रन्थ में लिखा है, कि-

ध्यान

पाथः संयुतमेघसन्निभतनुः प्रद्योतनस्यात्मजो,
नृणां पुण्यकृतां शुभावहवपुः पापीयसां दुःखकृत् ।
श्रीमद्दक्षिणदिक्पतिर्महिषगोभूषांभरालङ्ग्कृतो,
ध्येयः संयमनीपतिः पितृगणस्वामी यमो दण्डभृत् ।।

अर्थात् जल से भरे हुए बादल के समान श्याम शरीर वाले सूर्य के पुत्र श्रेष्ठ कार्य करने वाले मनुष्यों के जीवन को उत्तम फल देने वाले, दुराचारियों को दुख देने वाले, दक्षिण दिशा के स्वामी भैसे की सवारी पर आरूढ़, विभिन्न प्रकार के श्रेष्ठ आभूषणों से सुशोभित, पितृगणों एवं नरकपुरी के स्वामी दण्डधारी यमराज को प्रणाम।

यह स्पष्ट है, कि यमराज सूर्य के पुत्र हैं, अतः यमराज की पूजा करने से सूर्य पूजा का भी फल प्राप्त होता है और सूर्य मनुष्य के व्यक्तित्व के स्वामी प्रधान देव हैं, जिनके चारों ओर सभी ग्रह परिक्रमा करते हैं, ऊपर लिखित मंत्र धर्मराज यमराज का ध्यान मंत्र है।

धर्मराज साधना

यह तो स्पष्ट है कि सभी प्रकार की बाधाओं, रोग, शोक का मूल कारण मनुष्य के कर्म हैं और उनका निर्णय करने का अधिकार केवल धर्मराज यमराज को ही है अतः धर्मराज यमराज की पूजा एवं साधना करने से मनुष्य को शरीर, मन, कार्य की दृष्टि से पूर्णता प्राप्त होती है, विभिन्न रोग पूर्ण नियंत्रण में रहते हैं।

आप जो कार्य करते हैं, उनका प्रभाव आपके परिवार पर भी पूर्ण रूप से पड़ता है, अतः धर्मराज यमराज की साधना पूरे परिवार के लिए अत्यन्त आवश्यक है, 'रहस्य तन्त्रम्' ग्रन्थ में कहा गया है, कि-

मृत्युंजयेन पुटितं धर्मराजस्य मन्त्रं जपेत् ।
सर्वोपद्रव सन्त्यक्तो लभते वांछितं फलम् ।।

अर्थात् जो व्यक्ति मृत्युंजय मंत्र से सम्पुटित धर्मराज मंत्र का जप एवं साधना करता है, वह सब उपद्रवों से मुक्त हो कर वांछित फल को प्राप्त करता है।

शारीरिक व्याधि से अधिक पीड़ा कारक मानसिक व्याधि है, जिसके कारण से मनुष्य हर समय चिन्तित रहता है, और उसके जीवन में उन्नति नहीं हो पाती है, मानसिक व्याधियों का मूल कारण पारिवारिक अशांति, राजकीय बाधा, सभी कार्यों में निरन्तर रुकावट, विभिन्न प्रकार की शारीरिक पीड़ाएं होती हैं, अतः मन को श्रेष्ठ कर लेने से शरीर श्रेष्ठ हो जाता है और इस कार्य के लिए धर्मराज साधना हर दृष्टि से उपयुक्त है।

इस साधना के फलस्वरूप वर्तमान समय के दुःखों का समाधान तो प्राप्त होता ही है, आने वाले समय में भी आने वाली बाधाओं के निवारण में पूर्ण अनुकूलता प्राप्त होती है।

जो व्यक्ति भय को जीत लेता है, वह संसार को जीत सकता है तथा धर्मराज साधना है जिसका पूर्ण फल प्राप्त होने पर सभी कार्य निरन्तर सफल होते रहते हैं।

साधना समय

सभी साधनाओं के लिए कुछ विशेष समय तथा दिन निर्धारित किये जाते हैं, जिसके कारण साधना का पूर्ण लाभ प्राप्त हो सके, पूरे वर्ष में कोई भी साधना किसी भी समय सम्पन्न की जा सकती है, लेकिन निश्चित समय पर साधना प्रारम्भ करने से उसका फल कई गुना अधिक प्राप्त होता है, यमराज सूर्यपुत्र होने के कारण इस साधना को रविवार को ही प्रारम्भ एवं सम्पन्न करना उचित है, इस वर्ष दिनांक 18.07.21 को केतु सिद्धि दिवस है, अतः प्रत्येक साधक साधिका को इस दिन यह विशिष्ट साधना अवश्य सम्पन्न करनी चाहिए।

साधना विधि

इस विशिष्ट साधना हेतु विशेष सामग्री की आवश्यकता रहती है, और यह सामग्री 21 गोमती चक्र, 21 हकीक पत्थर तथा एक ऋतु फल आवश्यक है, यदि तरबूज का फल प्राप्त हो सके तो अत्यन्त उत्तम रहता है। इसके अलावा काजल, धूप, दीप, नैवेद्य, कुंकुम, लाल चंदन, पुष्प इत्यादि पहले से लाकर

जो व्यक्ति मृत्युंजय मंत्र से सम्पुटित धर्मराज मंत्र का जप एवं साधना करता है, वह सब उपद्रवों से मुक्त हो कर वांछित फल को प्राप्त करता है।

रखें।

सर्वप्रथम स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण कर अपने पूजा स्थान में रात्रि को बैठें, लकड़ी के एक बाजोट (चौकी) पर लाल वस्त्र बिछाकर काजल से एक त्रिकोण बनायें, त्रिकोण का मुंह आपकी ओर हो, त्रिकोण के सबसे ऊपर वाली भुजा पर 7 गोमती चक्र तथा 7 हकीक पत्थर रख दें तथा त्रिकोण की दूसरी दोनों भुजाओं पर 5 गोमती चक्र तथा 5 हकीक पत्थर रखें, सबसे नीचे त्रिकोण बिन्दु पर एक गोमती चक्र तथा एक हकीक पत्थर रखें, इस प्रकार प्रत्येक भुजा पर सात-सात बिन्दु हो जायेंगे। त्रिकोण के मुंह के पास एक-एक गोमती चक्र तथा उस पर एक-एक हकीक पत्थर रखें। ये दोनों यमराज के द्वारपाल हैं, त्रिकोण के मध्य में एक गोमती चक्र तथा एक हकीक पत्थर और तरबूज का फल रखें।
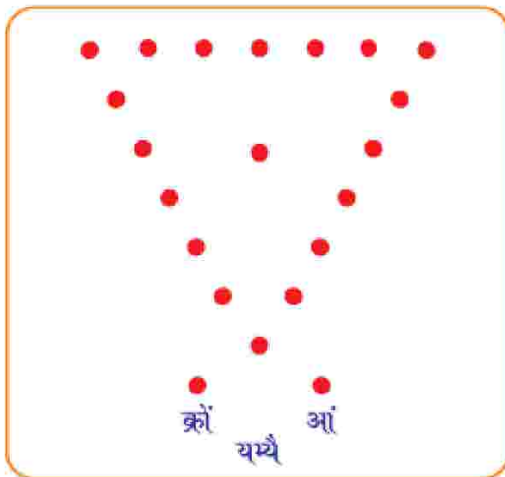
इस साधना को रात्रि को ही सम्पन्न करना आवश्यक है, साधना के समय तेल का दीपक तथा धूप अवश्य जलायें, उपरोक्त तिथि को अथवा किसी भी रविवार को साधना प्रारम्भ करने से पहले संक्षिप्त रूप से गुरू पूजन करें, और उसके पश्चात् साधना सामग्री ऊपर दिये गये विवरण के अनुसार रखकर धर्मराज यमराज साधना प्रारम्भ करें, साधना प्रारम्भ करते समय यमराज का ध्यान कर निम्न लिखित मंत्र पढ़कर संकल्प करें-

मम सकलापदां विनाशनाय सर्वरोगाणां प्रशमनाय श्री धर्मराज मन्त्रजपऽहं करिष्ये ।

इसके पश्चात् इस लेख में दिये गये ध्यान मंत्र का जप 21 बार करें और यदि संस्कृत में जप संभव न हो सके तो उसके हिन्दी अनुवाद का जप करे, प्रत्येक बार मंत्र जप के साथ ही एक गोमती चक्र पर अपने हाथ रखें, इस प्रकार सामने बाजोट पर बनाये गये प्रत्येक बिन्दु पर एक-एक बार हाथ रखकर ध्यान आवश्यक है।

प्रत्येक बार ध्यान मंत्र का जप करते हुए मानसिक रूप से संकल्प आवश्यक है और जिस प्रकार की बाधाओं के निराकरण हेतु ये साधना की जा रही है, उन विशेष बाधाओं का नाम लेकर 'मेरा कार्य सफल करो' यह पूजा आवश्यक है। इसके पश्चात काले हकीक माला से निम्न मन्त्र की 11 माला जप वहीं आसन पर बैठ कर करें।

मंत्र

।। ॐ ह्रीं क्रों मां वेवस्वताय धर्मराजाय भक्तानुग्रहकृते नमः ।।

इस मंत्र का जप नियमित रूप से ही किया जा सकता है, सात दिन नियमित रूप से इस मंत्र का जप करने से परिणाम सामने दिखाई देते हैं।

मंत्र समाप्ति से पश्चात् यंत्रभुज के बीच में रखे हुए तरबूज को काटे और उसमें से कुछ हिस्सा धर्मराज को अर्पित करें, यह बलि विधान है, शेष तरबूज उसी स्थान पर बैठे स्वयं ग्रहण करें।

साधना की पूर्णता के पश्चात् सब सामग्री तथा वस्त्र किसी पीपल के वृक्ष के नीचे रखें अथवा नदी में अर्पित कर दें-

उड्डीस तंत्र में लिखा है कि -

।। मृत्योर्मा नित्यं यः करोति दिने दिने
तस्य रोगाः प्रणयन्ति दीर्घायुश्च प्रजायते।।

अर्थात् जो व्यक्ति प्रति दिन धर्मराज यमराज मंत्र का जप करता है, उसके सभी रोग नष्ट हो जाते हैं और वह दीर्घायु समस्त सुखों के साथ प्राप्त करता है। धर्मराज यमराज सूर्य के पुत्र हैं तथा शुक्र के भ्राता हैं। शुक्र मनुष्य के जीवन में ऐश्वर्य, भोग, सांसारिक सुख एवं कामनाएं देने वाला ग्रह है अतः धर्मराज यमराज की पूजा करने से शुक्र पूजा का लाभ भी प्राप्त होता है। यह भी निश्चय है, कि जब दुःखों का व बाधाओं का अन्त होता है, तभी सुखों का प्रारम्भ होता है, बाधाओं के रहते सुखों का पूर्ण आनन्द ही नहीं लिया जा सकता है।

वर्तमान युग में समय देश काल को देखते हुए यह मंत्र विधान तथा पूजा अत्यन्त ही आवश्यक एवं लाभकारी है, प्रत्येक साधक को अपने कार्यों में अनुकूलता पूर्ण रूप से प्राप्त करने हेतु यह साधना अवश्य संपन्न करनी चाहिए तथा यदि संभव हो सके तो नियमित रूप से सोते समय यम मंत्र का जप अवश्य करें।

साधना सामग्री- 570/-

आध्यात्मिक उन्नति एवं मनःशक्ति जागरण

के लिए सर्वोपरि

11.07.21

जगन्नाथ साधना

कृष्ण षोडश कला पूर्ण व्यक्तित्व थे, उन्होंने जीवन के सभी आयामों का स्पर्श कर, उसकी पूर्णता तक पहुंच कर उन्हें समाज के सामने रखा... और उन्हीं के विभिन्न स्वरूपों में से उनका करुणामयी स्वरूप भी है, और यही करुणामयी स्वरूप 'जगन्नाथ' है, जिसकी साधना से जीवन में मोक्ष की प्राप्ति होती है, वहीं...

प्रत्येक व्यक्ति इस भौतिक शरीर रूपी रथ पर आरूढ़ है और बुद्धि उसकी सारथी है। मन चालक यंत्र है तथा इन्द्रियाँ घोड़े हैं, इस प्रकार मन तथा इन्द्रियों की संगति से यह आत्मा सुख या दु:ख की भोक्ता हैं'' और इन सुख-दु:ख के बन्धनों से मुक्त होना नि:सन्देह कठिन है, किन्तु इस ''जगन्नाथ साधना'' के द्वारा इनसे विरक्ति प्राप्त होती है तथा अद्वैत अवस्था को प्राप्त करने पर मोक्ष की प्राप्ति सम्भव है।

मन को समस्त प्रकार की दुश्चिन्ताओं सेशुद्ध करने के लिए यह परम शक्तिशाली एवं दिव्य विधि है, क्योंकि भगवान जगन्नाथ की साधना कर मनुष्य उन सब वस्तुओं के प्रति अनासक्त हो जाता है, जो मन को भ्रमित करने वाली होती हैं। मन को उन सारे कार्यों से विरक्त कर लेने पर ही मनुष्य सुगमता पूर्वक वैराग्य प्राप्त कर सकता है। वैराग्य का अर्थ है, पदार्थ से विरक्ति और मन का आत्मा में प्रवृत्त होना.... और यह 'जगन्नाथ साधना' से ही सम्भव है।

जग के नियन्ता, जग के पालनकर्त्ता अर्थात 'श्रीकृष्ण', जिनका एक करुणामयी स्वरूप जगन्नाथ भी है, 'जगन्नाथ' अर्थात् जग के नाथ, जिन्हें 'जगत गुरु' भी कहा गया है, और उसी प्रेममयी, करुणामयी प्रतिमूर्ति के साक्षात् दर्शन, पूजा-आराधना करना जीवन का परम सौभाग्य कहलाता है।

श्री जगन्नाथ जहाँ अपने इस स्वरूप में भक्तों के समक्ष विद्यमान हैं, उस स्थल को 'जगन्नाथ पुरी' के नाम से जाना जाता है, जो सही अर्थों में अद्वैत भाव का आश्रय स्थल है। हजारों-लाखों की संख्या में भक्तजन श्री जगन्नाथ भगवान के दर्शन करने के लिए दूर-दूर से वहाँ आया करते हैं, क्योंकि ऐसा कहा जाता है, कि जो भी व्यक्ति वहाँ सच्चे मन से, श्रद्धा-भावना से कुछ मांगता है, उसकी वह इच्छा शीघ्र ही पूर्ण हो जाती है।

यहाँ के वातावरण में ऐसी विशेषता है, कि किसी भी व्यक्ति या साधक को यहाँ पहुंचते ही एक अजीब सी शांति महसूस होने लगती है, और वह वहाँ के वातावरण की मोहक सुगन्ध में ही कहीं खोकर ध्यानावस्था में स्वत: ही चला जाता है, उसका मन शुद्ध, परिष्कृत व अद्वैतमय बन जाता है।

जीवन में मोक्ष-प्राप्ति के लिए अद्वैत अवस्था को प्राप्त करना अनिवार्य होता है, किन्तु व्यक्ति स्वयं इस स्थिति को प्राप्त करने में असमर्थ है। कहा जाता है, कि एक बार द्वारिका में माता रोहिणी, रुक्मिनी, सत्यभामा तथा अन्य पटरानियों के साथ विश्राम कक्ष में बैठी हुई थीं, और यूं ही माता रोहिणी कृष्ण की लीलाओं से उन्हें अवगत कराते हुए हंसी-ठिठोली कर रही थीं, तभी सुभद्रा ने हंसते हुए माता रोहिणी से कहा, कि ''आप भाभियों को कृष्ण गोकुल में कैसे रहा करते थे, वह वृत्तांत सुनाइए'', यह सुनकर रोहिणी की स्मृतियाँ, जब उन्होंने कृष्ण को पालने में झुलाया था से लेकर उनके बड़े होने तक की सभी बातें पुन: उनके मानस-पटल पर अंकित हो गईं, और उनकी आँखों से अश्रुकण छलकने लगे, तभी सुभद्रा ने कहा, कि ''मेरे यह कहने से अगर आपको दु:ख पहुंचा हो तो मैं क्षमा चाहती हूँ।''

माता रोहिणी ने कहा-''नहीं, मेरा मन तो उनके लीलामय स्वरूप को याद करके आनन्दित हो उठा था, इसीलिए ये आंसू निकल आए, किन्तु सुभद्रा मैं उनके स्वरूप का वर्णन अगर इन होठों से करूँगी, तो कृष्ण अपनी यादों में खो जायेंगे और दु:खी हो जायेंगे, इसलिए मैं नहीं चाहती, कि वे मेरी बातों को सुनकर व्यथित हो जाएं'', तब सुभद्रा ने माता रोहिणी को आश्वासन देते हुए कहा, कि '' आप चिन्ता न करें, आप निश्चिंत होकर उनके बारे में हमें बतायें, मैं कक्ष के दरवाजे पर खड़ी कृष्ण को देखती रहूँगी और उन्हें अन्दर न आने दूँगी।''

माता रोहिणी तब रुक्मिनी, सत्यभामा सभी को कृष्ण की अनन्त कथा, जो उनके गोकुल में बिताए सुन्दर व आनन्ददायक क्षण थे, सुनाने लगीं और सुनाते-सुनाते खुद भी इतना डूब गईं, कि मानो वह समय ही लौट आया हो, तभी कृष्ण और बलराम भी कक्ष से बाहर आ पहुँचे, और जैसे ही अन्दर जाने लगे सुभद्रा ने उन्हें रोक दिया, और कहा-''माँ रोहिणी की आज्ञा के बिना आप भीतर प्रवेश नहीं कर सकते, और जब तक माता की अनुमति नहीं होगी, तब तक मैं आपको अन्दर नहीं जाने दूंगी'' कृष्ण और बलराम दोनों ने एक-दूसरे की ओर देखा और वापिस मुड़कर जाने लगे, तभी कृष्ण को कुछ आवाजें कक्ष से बाहर आती हुई सुनाई दीं, उन आवाजों को सुनकर कृष्ण के पांव वहीं ठहर गए, अपनी ही जीवन लीला को सुनकर वे इतना अधिक खो गए, कि उनके अन्त:करण से, उनके रोम-रोम से करुणा का सागर बहने लग गया।

दूर खड़े नारद मुनि इस दृश्य को बड़े आनन्द के साथ आत्मसात कर रहे थे, और गद्गद कण्ठ से कृष्ण के निकट आकर बोले, 'हे प्रभु! आप तो करुणा निधान हैं, दया के सागर हैं, प्रेम स्वरूप हैं, आप अपने भक्तों पर कृपा कर तथा जन-कल्याण हेतु अपने इसी दिव्य स्वरूप को यहाँ स्थापित कर दीजिए, जिससे आपके इस प्रेममयी, करुणामयी स्वरूप को देख सभी मनुष्य मेरी तरह ही धन्य-धन्य हो सकें, और अपने जीवन के समस्त सुखों को प्राप्त कर सकें, जो भी यहाँ आपके दर्शन हेतु आये, वह आपकी कृपा-वर्षा से आप्लावित हो सकें, और एक अपूर्व शांति प्राप्त कर सकें, लीन हो सकें आप में'', तभी से वहाँ श्री कृष्ण अपने एक अंश स्वरूप में ''जगन्नाथ पुरी'' के नाम से विख्यात हो

जीवन में पूर्ण आध्यात्मिकता एवं अपने इष्ट के दर्शन हेतु 'जगन्नाथ साधना' ही श्रेयस्कर है। योगियों और ऋषियों आदि की बात तो अलग है, किन्तु गृहस्थ व्यक्ति के लिए अद्वैत स्थिति को प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है, परन्तु इस सिद्धि को प्राप्त कर, वह जीवन के समस्त सुखोपभोग को प्राप्त कर, सुखमय जीवन व्यतीत करते हुए अद्वैत स्थिति को प्राप्त कर सकता है, और यही जीवन की श्रेष्ठता है, पूर्णता है, सर्वोच्चता है, जो इस सिद्धि द्वारा साधक को प्राप्त हो जाती है, क्योंकि भगवान श्री जगन्नाथ करुणा के सागर हैं, दयानिधि हैं, दुःखों को दूर कर शत्रुओं का नाश करने वाले हैं।

गए।

जगन्नाथ पुरी एक दिव्य तीर्थ स्थल है, जहाँ पहुँच कर प्रभु-चिन्तन में मग्न हो साधक की समाधी भी लग जाती है, क्योंकि कृष्ण अपने प्रेममयी स्वरूप में ही वहां हर क्षण विराजमान रहते हैं, और उन्हीं कृष्ण की आराधना-साधना करना ही जीवन का अखण्ड सौभाग्य है।

जगन्नाथ साधना के माध्यम से साधक उस दिव्य तीर्थ स्थल के पुण्य को घर बैठे ही प्राप्त कर सकता है, और साथ ही इस साधना में सिद्धि प्राप्त कर, वह उनके साक्षात् दर्शन भी प्राप्त कर सकता है।

जीवन में पूर्ण आध्यात्मिकता एवं अपने इष्ट के दर्शन हेतु 'जगन्नाथ साधना' ही श्रेयस्कर है। योगियों और ऋषियों आदि की बात तो अलग है, किन्तु गृहस्थ व्यक्ति के लिए अद्वैत स्थिति को प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है, परन्तु इस सिद्धि को प्राप्त कर, वह जीवन के समस्त सुखोपभोग को प्राप्त कर, सुखमय जीवन व्यतीत करते हुए अद्वैत स्थिति को प्राप्त कर सकता है, और यही जीवन की श्रेष्ठता है, पूर्णता है, सर्वोच्चता है, जो इस सिद्धि द्वारा साधक को प्राप्त हो जाती है, क्योंकि भगवान श्री जगन्नाथ करुणा के सागर हैं, दयानिधि हैं, दुःखों को दूर कर शत्रुओं का नाश करने वाले हैं।

यह एक गुह्य साधना है, जिसका ज्ञान बहुत ही सीमित लोगों के पास है, उसी का संक्षिप्त विवरण ही इस पत्रिका में आपके सम्मुख प्रकाशित किया जा रहा है।

सामग्री : त्रिमुखी शंख, माधव प्रिया गुटिका, रोहिणी माला।
समय : प्रातः 5 बजे से 7 बजे तक।
दिन : 11.07.21से 13.07.21 तक या अन्य किसी भी गुरुवार से शनिवार तक।

प्रयोग विधि

यह तीन दिन की साधना है। साधकों को चाहिए कि वे प्रातः 4 बजे उठकर, स्नान आदि से निवृत्त होकर, सभी साधना सामग्रियों के साथ शान्त मन से पीले आसन पर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठ जाएं, फिर अपने सामने एक छोटी चौकी पर पीला कपड़ा बिछाएं और थाली, जो स्टील की भी हो सकती है, उसमें कुंकुम या केसर से 'ॐ' बनाएं एवं उसमें चावल की ढेरी बनाकर उस पर 'त्रिमुखी शंख' स्थापित कर दें, फिर शंख के तीनों मुखों में पीले रंग का चावल भर दें।

इसके ऊपर मनोवांछित 'माधव प्रिया गुटिका' स्थापित कर दें तथा 'रोहिणी माला' को शंख के ऊपर पहिना दें, और फिर कुंकुम, धूप व दीप से गुटिका एवं शंख पूजन करते हुए बाएं हाथ से कुछ चावल लेकर दाहिने हाथ से उन्हें कृष्ण के 21 नामों का उच्चारण करते हुए उस शंख व गुटिका पर चढ़ाएं–

ॐ कृष्णाय नमः ॐ गोपालाय नमः ॐ गोविन्दाय नमः
ॐ जगन्नाथाय नमः ॐ गोवर्धनाय नमः ॐ माधवाय नमः
ॐ अच्युताय नमः ॐ केशवाय नमः ॐ दामोदराय नमः
ॐ श्रीधराय नमः ॐ द्वारिकानाथाय नमः ॐ द्रौपदी रक्षकाय नमः
ॐ नरोत्तमाय नमः ॐ ब्रजेश्वराय नमः ॐ यशोदा नन्दनाय नमः
ॐ नंद-नंदनाय नमः ॐ गोपीजन वल्लभाय नमः ॐ अर्जुन प्रियाय नमः
ॐ योगेश्वराय नमः ॐ श्रेष्ठाय नमः ॐ मनोहराय नमः

यह पूजन सम्पन्न करने के पश्चात् निम्न मंत्र का तीन दिन तक प्रतिदिन एक घण्टा

जप करें, इस जप में माला की आवश्यकता नहीं है। माला, शंख को ही पहिनाए रखें।

मंत्र

।। ॐ जगन्नाथो कृष्णाय ।।

तीसरे दिन सभी पूजन सामग्रियों को (शंख और गुटिका को छोड़ कर) जल में प्रवाहित कर दें।

यह साधना अपने-आप में बहुत महत्वपूर्ण है, यथासम्भव प्रत्येक साधक को इसे पूर्ण मनोयोग से सम्पन्न करना ही चाहिए, इस साधना से साधक को अध्यात्म पथ पर बढ़ने के लिए अधिकाधिक प्रेरणा प्राप्त होती ही है, आंतरिक शक्ति का जागरण होता है। यह मुक्तिदायी साधना है एवं आत्मबल में वृद्धि करती है। साथ ही इस स्वरूप की साधना से कृष्ण के प्रत्यक्षीकरण का दिशा-निर्देश भी होता है।

इस साधना से कृष्ण करुणामयी स्वरूप में मुक्ति प्रदान करते हैं, तथा जीवन के हर क्षेत्र में पूर्णता प्रदान कर साधक के जीवन को रसमय एवं प्रेममय बना देते हैं, क्योंकि शुष्कता जीवन का अभिशाप है, अतः यह साधना प्रत्येक साधक के लिए अपेक्षित है।

साधना सामग्री- 570/-

रोग निवारण प्रयोग

घर में किसी को रोग की समस्या हो और उससे छुटकारा पाने के लिए कोई उपाय कारगर न सिद्ध हो रहा हो, तो साधक को यह प्रयोग घर पर अवश्य सम्पन्न करना चाहिए।

- **सामग्री** : पारद गणपति
- **दिवस** : शुक्ल पक्ष का कोई भी सोमवार

विधान

किसी भी शुक्ल पक्ष में पड़ने वाले सोमवार को प्रातः स्नानादि से निवृत्त होकर पहले गुरू पूजन कर गुरू मंत्र की चार माला मंत्र जप करें, फिर किसी पात्र में कुंकुम या अष्टगंध से स्वास्तिक बनाकर उस पर पारद गणपति को स्थापित करें। फिर पारद गणपति का संक्षिप्त पूजन करें और उस पर जल चढ़ाते हुये निम्न मंत्र का पांच मिनट तक जप करें -

मंत्र

।। ऊँ गुं नमः।।

फिर चढ़ाये गये जल को एकत्र करके उसे पूरे घर में उपरोक्त मंत्र का जप करते हुये छिड़क दें। ऐसा आगे आने वाले चार सोमवार को करें, घर में आरोग्यता होगी।

पारद गणपति- 600/-

मानव जीवन में कई इच्छायें होती हैं,
हर एक इच्छा की सहयोगी इच्छा अथवा परिवर्ती इच्छा के रूप में निरंतर उसके मानस में कोलाहल चलता ही रहता है। हर मानव की मुख्य व प्रथम इच्छा धन की होती है।
उसके आ जाने पर उसके उचित रूप से व्यय की बात सोचता है फिर उसे आयकर से बचाने का प्रयास करता है, उसे चोरी हो जाने से बचाने का भी चिंतन करना पड़ता है।
जमा धन समाप्त न हो और उसकी निरंतर वृद्धि होती रहे, इसका भी उसे विचार करना ही पड़ता है। यह तो एक बात हुई। इसी तरह से देखा जाए तो अनेक इच्छायें और उनसे जुड़ी फिर अनेक इच्छायें! तात्पर्य यह कि उसका चिंतन समाप्त नहीं होता।

निर्विचार मन

यद्यपि व्यक्ति यह मान लेता है कि मैं सुखी हो गया, मैंने इतना प्राप्त कर लिया, वस्तुतः वह मानसिक तनाव और बढ़ा चुका होता है। इसी बात को ध्यान में रख भारतीय मनीषियों ने **"विचार शून्य मन"** के प्रतिपादन का सिद्धांत रखा। उनका मत था कि हमारी जो प्राण शक्ति विभिन्न दिशाओं में बंटकर व्यर्थ सी हो जाती है, उसका क्षरण रोकना ही होगा। उन्होंने तो इस प्रकार का चिंतन परमतत्व की प्राप्ति के लिए किया था किन्तु सुलझे हुये मस्तिष्क से हम यदि विचार करें तो ठीक यही बात हमारे प्रति भी उतनी ही सटीक बैठती है, भले ही हम भौतिक जीवन में ही क्यों न हों।

'निर्विचार मन' होने पर व्यक्ति किन्हीं तनाव का दास नहीं बनता वरन अपना ही स्वामी बन बैठता है। वह अपने जीवन को व्यवस्थित व क्रमबद्ध करके सुख, चैन और शांति की ओर बढ़ जाता है। निर्विचार मन एक अत्यंत कठिन दशा है, इसके लिए तो व्यक्ति को अपनी जीवन शैली बदलनी होगी तभी तो हम कम से कम इच्छायें रखेंगे और कम से कमतर होती इच्छायें ही हमें उस द्वार की ओर बढ़ाती हैं जिसे पार कर हम निर्विचार मन के शांत अखण्ड आनन्द युक्त साम्राज्य में प्रवेश कर जाते हैं।

कैसे निर्विचार हों

प्रारंभ में व्यक्ति जब शांत होने का, निर्विचार होने का प्रयास करता है तो उसके अंदर तीव्र कोलाहल मच जाता है, पता नहीं कब-कब की जमा वासनायें, कुंठायें उभर कर सामने आती हैं और व्यक्ति आश्चर्य चकित रह जाता है कि अरे! उसके अंदर यह सब भी भरा था! निर्विचार होना इतना सहज नहीं है।

व्यक्ति को नियमित अभ्यास करना पड़ेगा, नित्य प्रति एकांत में रहना भी व्यक्ति के लिए उपयोगी रहता है। विभिन्न प्रकार के व्यक्ति और विशेषकर ऐसे व्यक्तियों का साथ छोड़ना ही पड़ता है जो व्यर्थ बकवादी हों अथवा हंसी ठट्ठा करने वाले हों, ऐसे क्रिया कलाप चित्त को डांवाडोल ही करते हैं। मितभाषी होना ही पड़ेगा, जिससे उसका अनुकूल असर पड़ सके। इसी तरह आहार-विहार में परिवर्तन कर उसे यथासंभव शाकाहारी होना होगा और संभव हो सके तो कुछ महीने केवल दूध एवं फलाहार पर रहे, यह और भी अनुकूल होगा। कड़ी मेहनत करना भी ऐसे अभ्यासी व्यक्ति के लिए अधिक अनुकूल नहीं क्योंकि अधिक मेहनत करने से भी चित्त डांवाडोल रहता है, अतः निर्विचार मन की अवस्था नहीं बन पाती। गीता में वर्णन आता है -

नात्यश्नस्तु योगोस्ति चैकान्त मनस्ततः,
न चातिस्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन,
युक्ताहार विहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु,
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।

(गीता)

अर्थात् ''योगी को अधिक विलास और कठोरता दोनों ही त्याग देने चाहिए, उनके लिए अधिक उपवास करना या देह को किसी प्रकार कष्ट देना उचित नहीं। जो अपने को अनर्थक क्लेश देते हैं, वे कभी योगी नहीं हो सकते। अतिभोजनकारी, उपवासशील, अधिक जागरणशील, अधिक निद्रालु अत्यंत कर्मी अथवा बिलकुल आलसी इसमें से कोई भी योगी नहीं हो सकता।''

हमें यह तथ्य ध्यान में रखना होगा कि योगी का अर्थ केवल संन्यासी या भगवा वस्त्रधारी व्यक्ति मात्र से ही नहीं है, जो भी अपने आपको परमतत्व से मिलाने का आग्रही हो, वही योगी पद की संज्ञा पाने का अधिकारी है, फिर भले ही वह गृहस्थ हो, अधिकारी हो, वकील हो, डॉक्टर हो, चार्टर्ड एकाउन्टेंट हो, कहने का तात्पर्य कि किसी भी पद पर कार्यशील हो।

ऊपर योगी के लिए बताए गुण उस व्यक्ति के लिए भी पर्याप्त हैं, जो निर्विचार मन प्राप्त करने की दिशा में प्रयत्नशील है। अंतर्जगत का लोक इतना सहज नहीं होता कि उसे हम जब चाहे छेड़ दें या उसमें उतर जाएं। इसके लिए तो क्रमबद्ध उपाय करने

योगी का अर्थ केवल संन्यासी या भगवा वस्त्रधारी व्यक्ति मात्र से ही नहीं है, जो भी अपने आपको परमतत्व से मिलाने का आग्रही हो, वही योगी पद की संज्ञा पाने का अधिकारी है, फिर भले ही वह गृहस्थ हो, अधिकारी हो, वकील हो, डॉक्टर हो, चार्टर्ड एकाउन्टेंट हो, कहने का तात्पर्य कि किसी भी पद पर कार्यशील हो।

पड़ते हैं अन्यथा लाभ के स्थान पर हानि भी हो सकती है। पातंजल योग सूत्र में इसका एक सुन्दर वर्णन आया है कि व्यक्ति किस प्रकार अपने मन को एकाग्र अथवा निर्विचार कर सकता है।

यद्यपि उसमें उन्होंने यह वर्णन समाधि के संदर्भ में दिया है किन्तु सामान्य व्यक्ति के लिए पर्याप्त उपयोगी हो सकता है, इसके अनुसार -

''विशोका वा ज्योतिष्मती वीतराग विषय व चित्तम् स्वप्नानिद्राज्ञानलिम्बनां व यथाभिमतध्यानानाद्रा''।

अर्थात् ''शोक से रहित ज्योतिष्मान पदार्थ के ध्यान से, अथवा जिस हृदय ने इन्द्रिय विषयों के प्रति समस्त आसक्ति छोड़ दी है, अथवा स्वप्न ज्ञान में कभी-कभी जो अपूर्ण ज्ञान लाभ होता है, अथवा जिसे जो भी चीज अच्छी लगे, उसी के ध्यान से समाधि प्राप्त होती है।'' यदि हम विचार कर देखें तो इसमें ऐसी कोई भी बात नहीं जो हम आप नहीं अपना सकते और अपना जीवन शांतियुक्त नहीं बना सकते।

मन को निर्विचार बनाने के लिए योग साधना में कुछ व्यवहारिक विधियां दी गई हैं जो कि अत्यंत सहायक होती हैं।

पहली विधि

अपने दोनों हाथों को सामने की ओर फैला दें, इस बात का ध्यान रखें कि दोनों हथेलियां जमीन की ओर रहें तथा हाथ पूरी तरह से तने हुये हों। इसके बाद आप धीरे-धीरे श्वास लीजिये और बाहर श्वास निकालिये।

दूसरी विधि

अपने दोनों हाथों को सीधा सामने फैला कर कुछ समय तक खड़े रहिये और उसके बाद धीरे-धीरे उन हाथों को सिर की ओर ले जाइये और हाथों को तान दीजिए। इसके बाद श्वास तो आपको धीमे ही फेफड़ों में भरनी है किन्तु निकालना होगा तेजी के साथ।

तीसरी विधि

अपने दोनों हाथों को इस तरह सामने फैलायें कि हथेलियां आमने सामने रहें और श्वास की क्रिया तो तीव्र रखनी है किन्तु प्रश्वास धीमे-धीमे अर्थात् दूसरे क्रम के विपरीत ढंग से बाहर फेंकिए।

चतुर्थ विधि

दोनों हाथों की अंगुलियों को एक दूसरे में फंसाकर आकाश की ओर जितनी ऊंचाई तक दोनों हाथ उठा सकें, उठाइये और फिर गहरी सांस लीजिये तथा धीरे-धीरे सांस को बाहर निकालिए।

उपरोक्त विधियां प्राणायाम का ही प्रकार हैं किन्तु मन को निर्विचार बनाने की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। निर्विचार बनाने के इच्छुक व्यक्ति को ध्यान देना चाहिए कि वह ऐसी बातों से बचे जो क्षणिक स्नायाविक उत्तेजना देती हैं। निर्विचार मन बनाकर न केवल हम सम्मोहन ज्ञान के क्षेत्र में एक कदम आगे बढ़ जाते हैं, वरन् इससे सम्पूर्ण स्वास्थ्य पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है। निर्विचार मन से निश्चित रूप से स्वर की मधुरता आती ही है और जिनको स्वर विकार हो उनको तो विशेष लाभप्रद रहेगा। आगे बढ़ने पर कुछ ऐसी दिव्य अनुभूतियां भी होने लगती हैं जो मन को आह्लादित बनाये रखती हैं।
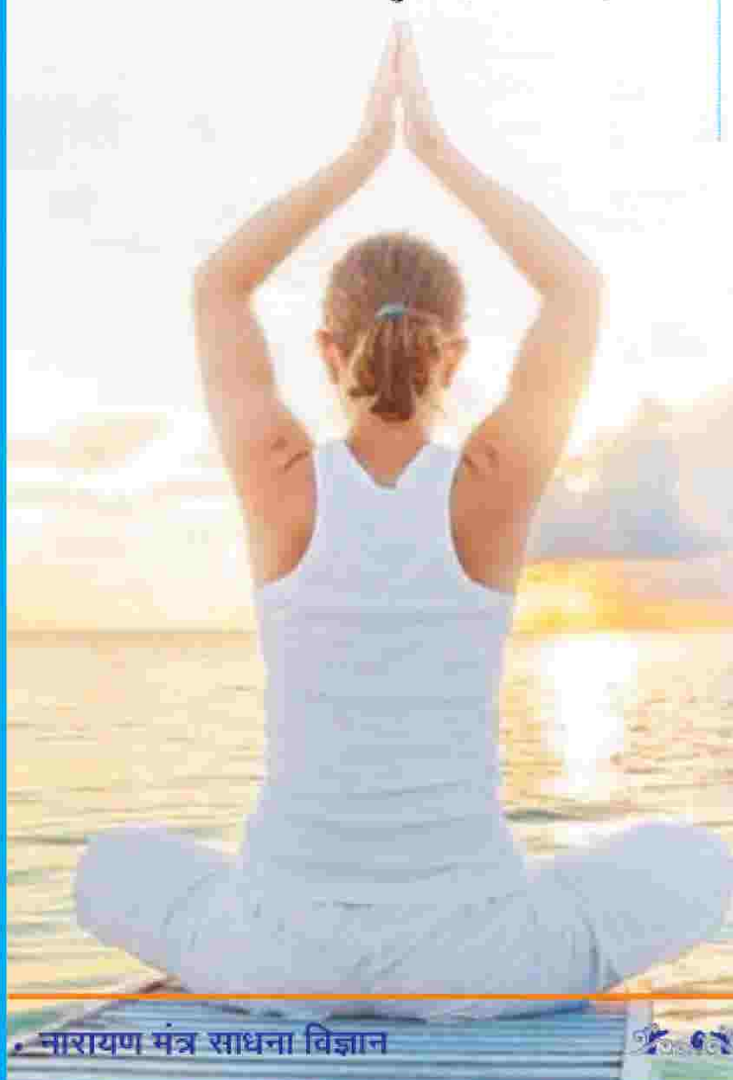
कपूर

नाम : संस्कृत-कपूर, घनसार। हिन्दी - कपूर। गुजराती - कपूर। मराठी - कार्पूर। बंगाली - कर्पूर। तेलंगी-कर्पूरम्। लेटिन - Camphora Officinarum

भारतवर्ष के अंदर केले के झाड़ से पैदा होने वाला कपूर उत्तम माना गया है। इसके अतिरिक्त भारतवर्ष में और भी कुछ पेड़ ऐसे होते हैं जिनसे कपूर प्राप्त किया जा सकता है।

यह सिना मोमरा कैफेरा नामक पेड़ से प्राप्त किया जाता है। यह पेड़ चीन, जापान में सबसे अधिक होते हैं। भारत में यह देहरादून, नीलगिरि और मैसूर आदि में पैदा किया जाता है। भारत में ज्यादातर कपूर बाहर से आता है।

बंगाल के मैदानों में पाई जाने वाली निम्नोफिला, प्रीटी आलाइडस (अम्बुज, अम्बुली) नाम की वनस्पतियों से भी बंगाल में कपूर प्राप्त किया जाता है।

इतने उत्तम साधन के रहते हुए भी भारतवर्ष अपनी कपूर की माँग के लिये विदेशों पर ही निर्भर है।

गुण, दोष और प्रभाव : आयुर्वेदिक मत - सुश्रुताचार्य के मत से कपूर कड़वा, सुगंधित, शीतल, हलका, लेखन तथा तृषा, मुख शोष (विरसता) और अरुचि को दूर करने वाला है।

भाव प्रकाश के अनुसार कपूर शीतल, वीर्यजनक, नेत्रों को हितकारी सुगंधित होता है। यह कफ, पित्त, विष, दाह, अरुचि और दुर्गन्ध का नाश करता है।

यूनानी मत से कपूर दिल और दिमाग को कूवत देने वाला तथा क्षय, जीर्णज्वर, निमोनिया, अतिसार और फेफड़े के जख्म को लाभ पहुँचाने वाला होता है। चर्म रोगों के ऊपर भी इसकी क्रिया बहुत लाभदायक होती है। जहरीले और फैलने वाले फोड़े-फुन्सियों को इसके इस्तेमाल से बड़ा लाभ होता है।

कपूर के अंदर कृमिनाशक गुण भी बहुत अच्छी तादाद में मौजूद है। इसकी खूशबू से रोगोत्पादक कीड़े मर जाते हैं और खराब हवा साफ हो जाती है। हैजे की बीमारी को नष्ट करने के लिये यह औषधि अपना प्रधान अस्तित्व रखती है। इसके अतिरिक्त बुखार, सूजन, दवा, कुक्कुर खाँसी, दिल की धड़कन, गठिया, जोड़ों का दर्द आदि रोगों में भी बहुत लाभ पहुँचाता है।

पाचन नली पर कपूर के प्रभाव : कपूर को मुँह में रखने से लार बढ़ती है, आमाशय में पहुँच कर यह उष्णता को बढ़ाता है। पाचनरस की वृद्धि करता है आमाशय की सड़ांध को दूर करता है और पाचन क्रिया को बढ़ाता है।

कपूर का वायुनाशक धर्म आमाशय और आँतों के रोगों में बहुत उपयोगी है। इसलिये दस्त, वमन, हैजे की प्रथम अवस्था में इसका बहुत व्यवहार किया जाता है। हृदय रोगों में भी कपूर बहुत लाभदायक होता है।

उपयोग :

नारू : कपूर और नरकचूर एक-एक तोला लेकर पीस लें, फिर इसमें तीन तोला गुड़ मिला कर कपड़े या रूई के फोये पर मलहम की तरह फैला लें और उस फाये या कपड़े के बीच में एक छेद रखें और उसको नारू पर चिपका दें। इस प्रयोग से 2-3 दिन में सारा नारू उस छेद की राह से होकर निकल जाता है।

दमा : दो रत्ती कपूर और दो रत्ती हींग की गोली बनाकर दमे के दौरे के टाइम हर दूसरे तीसरे घण्टे में देने से दमे का दौरा रुक जाता है। अगर इस प्रयोग के साथ रोगी की छाती पर तारपीन के तेल की मालिश की जाए तो विशेष लाभ होता है।

सुजाक : 2 रत्ती कपूर में आधी रत्ती अफीम मिलाकर देने से पेशाब करते समय होने वाली सुजाक की पीड़ा बन्द होती है।

दन्त शूल : दांत के गड्ढे में कपूर रखने से दाँत की पीड़ा और दांत का बिगड़ना बंद हो जाता है।

गठिया : अफीम व कपूर को राई के तेल में मिला कर मर्दन करने से मांस-पेशियों और रक्त वाहिनी शिराओं की गठिया की पुरानी पीड़ा मिट जाती है।

बिच्छू का जहर : कपूर को सिरके में पीस कर डंक पर लगाने से बिच्छू, मखी और बर्रे का विष उतरता है।

पित्ती : कपूर को खोपरे के तेल में मिलाकर मालिश करने से पित्ती में लाभ होता है।

नकसीर : कपूर को गुलाब जल में पीस कर नाक में टपकाने से और पेशानी पर उसकी मालिश करने से नकसीर बंद होता है।

जली त्वचा में : अगर आपकी त्वचा कहीं से हल्की सी जल जाए तो नारियल के तेल में कपूर मिलाकर लगायें जब तक ठीक न हो लगाते रहें।

सिरदर्द : नीम्बू के रस में कपूर मिलाकर सिर पर लगाने से सिर दर्द और भारीपन दूर हो जायेगा।

कपूर तेल को त्वचा पर सीधे न लगायें इससे त्वचा में जलन हो सकती है। इसे नारियल तेल में मिलाकर ही लगाना चाहिए।

गठिया दर्द में : 500 मिलीलीटर तिल के तेल में 15 ग्राम कपूर मिलाकर शीशी धूप में रखें पूरी तरह घुल जाने पर जोड़ों पर अच्छी तरह मालिश करें।

अमृत बिन्दु : कपूर, अजवाइन का सत एवं पीपरमेंट बराबर मात्रा में ले लें फिर एक काँच की बोतल में डाल कर ढ़क्कन बंद करके रख दें कुछ समय बाद तीनों का मिश्रण द्रव्य रूप में परिवर्तित हो जायेगा। इस औषधि का 4-5 बूंद बताशे के साथ देने से हैजा, पेट दर्द, अतिसार, अजीर्ण इत्यादि सैकड़ों प्रकार के रोगों में बड़ा लाभ पहुँचता है।

शरीर में खुजली : नारियल के तेल में कपूर मिलाकर लगाने से त्वचा की खुजली ठीक होती है। नारियल के तेल को हल्का सा गर्म करके कपूर मिलायें। (1 रत्ती = 120 मिलीग्राम, 1 ग्राम = 1000 मिलीग्राम)

(उपयोग से पूर्व अपने वैद्य की सलाह अवश्य लें)

आरोग्य रहने के अमृत बिन्दु

1. प्रातः सूर्योदय से पूर्व सोकर उठने की आदत बनायें
2. खाने में यदि सेंधा नमक उपयोग करेंगे तो आप अनेकों बीमारियों से बचे रहेंगे।
3. रसोई में अल्युमीनियम के स्थान पर स्टील का कूकर उपयोग करें।
4. रिफाइंड तेल का उपयोग न करें, उसके स्थान पर मुंगफली, सरसों, तिल या नारियल तेल का उपयोग करें।
5. देशी गाय का घी ही उपयोग में लायें, अनेक रोग दूर होंगे और इसके खाने से वजन भी नहीं बढ़ता।
6. भोजन बनाते समय मीठा नीम/कढ़ी पत्ता का उपयोग करें, स्वास्थ्य अच्छा रहेगा।
7. खाना बनाने में लोहे की कढ़ाई का उपयोग करें, आयरन की कमी नहीं होगी।
8. भोजन करने का समय निश्चित करें, पेट ठीक रहेगा। भोजन के बीच बातें न करें।
9. नाश्ते में अंकुरित अन्न शामिल करें, पोषक तत्व एवं फाइबर मिलेगा।
10. चीनी का कम से कम उपयोग करें। उसके स्थान पर गुड़ या देशी शक्कर का उपयोग करें। गुड़, सफेद नहीं जो हलका लाल होता है उसे खायें।
11. छौंक लगाते समय राई आदि मसालों के साथ यदि कलौंजी का भी उपयोग करेंगे तो अनेक फायदे होंगे।
12. चाय पीने के स्थान पर आयुर्वेदिक पेय पीने की आदत बनाये, निरोग रहेंगे।
13. नाक में सरसों का तेल या देशी गाय का घी लगायें, मस्तिष्क और फेफड़े स्वस्थ रहेंगे।
14. करेला, मेथी आदि कड़वी सब्जियाँ खाने से रक्त शुद्ध रहेगा।
15. फ्रिज के पानी के स्थान पर पीने में मटके के पानी का उपयोग करें।
16. किचन में अल्युमीनियम के बर्तन का उपयोग न करें, कई बीमारिया पैदा करते हैं।
17. जहाँ तक सम्भव हो, बाहर का खाना न खायें जो भी खाना हो जानकारी लेकर घर पर ही बनायें।

18. मैदा की बनी तली चीजें खानी छोड़ दें तो ही अच्छा रहेगा।

19. अपनी रसोई में अदरक और अजवाइन का प्रयोग बढ़ायें गैस नहीं बनेगी, शरीर में दर्द भी कम होंगे।

20. रसोई घर में चप्पल-जूते पहनकर न जायें।

21. रात में आधा चम्मच त्रिफला पाउडर एक कप पानी में डालकर रखें, सुबह सूती कपड़े से छानकर इस जल से आँखें धोयें, आपकी दृष्टि में सुधार होगा।

22. छानने के बाद जो पाउडर बचे, उसे एक गिलास पानी में डालकर पुनः रख दें रात में उसे पी लें, पेट साफ रहेगा।

23. कभी-कभी थोड़ा नमक एवं हल्दी में सरसों का तेल डालकर दांतों को उंगली से साफ करें, दांतों के रोग नहीं होंगे।

24. सुबह के खाने में घर में जमाया हुआ, गाय के दूध का ताजा दही जरूर शामिल करें।

25. खाना खाने के 1 घंटे बाद ही पानी पीना चाहिए।

26. पानी को किसी स्थान पर बैठकर ही पीना चाहिए एवं पानी धीमे-धीमे एवं घूंट-घूंट पीयें जिससे मुंह की लार पानी के साथ मिलकर अधिक से अधिक पेट में जा सके।

27. सुबह उठते ही बिना कुल्ला किये 1-2 गिलास पानी पीना चाहिए।

28. खाना जमीन में बैठ कर पालथी लगाकर ही खायें, शीघ्र पचता है।

29. दोपहर के भोजन के बाद 30 मिनट आराम करना चाहिए एवं शाम के भोजन के बाद थोड़ा टहलना अवश्य ही करना चाहिए।

30. सुबह चाय के स्थान पर आप हल्दी वाला गरम पानी पीते हैं तो आपका दिमाग तेज एवं ऊर्जावान होता है। यह खून भी साफ करता है और दिल की बीमारियों से बचाता है। यह किसी औषधि से कम नहीं है। आप इसमें शहद एवं नींबू रस भी मिला सकते हैं।

31. आप मेथी दाने (एक या दो चम्मच) रात्रि में पानी में डाल दें एवं प्रातःकाल मेथी दाना खाकर उसी पानी को पी लें तो अनेक बीमारियों से बचे रह सकते हैं।

32. खाना खाने के बाद 5-10 मिनट वज्रासन में बैठें।

(उपरोक्त चीजों का उपयोग करने से पूर्व अपने वैद्य या डॉक्टर की सलाह अवश्य ले लें।)
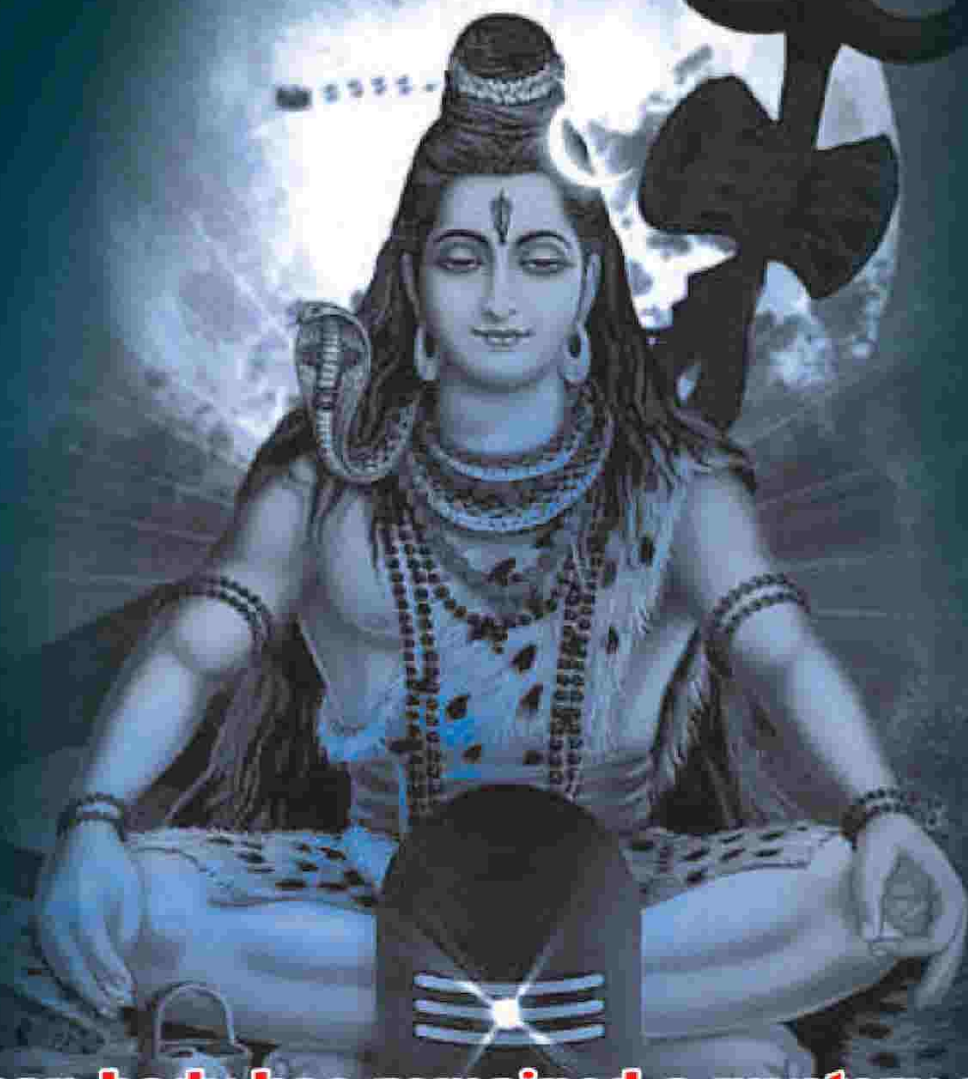
KRIYA YOG

Hence the conclusion that all Yogis and Saadhaks reached was that the human consciousness is two pronged - the inner consciousness and the outer consciousness. where the role of the outer one is to take care of the day to day life and get influenced by all outer things the inner one always remains pure, unstained and helps develop divine traits in a person.

On acquiring a thoughtless mind a person becomes one with the universe. He becomes divine and attains super capabilities like mentally ordering someone thousands of miles away. Travelling thousands of miles in a second clairvoyance, clairaudience, telepathy etc.

This inner consciousness is free of all passions and it cannot be cajoled into temptations. Hence Kriya Yog stresses on the effort to conjoin the outer consciousness with the inner so that a person may turn into a true human by sublimating all his passions and becoming divine. In fact this union of the outer and inner consciousness is called KriyaYog.

When this happens a person experiences a soothing light within himself, all his tensions fade away and he understands that the real bliss is not without but within!

KriyaYog can principally be divided into three parts :

Dhyan

It brings the mind to rest but makes it more conscious. It is just like a process of looking down at the bottom of a pool through its perfectly still water. It is the best device to wipe out all tensions, diseases, depressions and confusion.

During Dhyan when a person touches his inner consciousness he visualises a spot of light, vhich enlarges gradually. First it is only a small bluish point which expands as the practice goes deeper. Then the person may see all the seven colours in it and as he continues all colours may blend into a bright white light. This is an indication of the activation of the Third Eye. Now the person may visualise his own or anyone's past and future easily.

Dharanna

This is a state of establishing oneself in ones Higher Self. Such a person becomes a 'Saakshi', a witness to all events and Mayic influences do not affect him. This is also called the Paramhans state.

Samaadhi

It is a state of wiping out one's personality completely and fusing one's consciousness with the Universal Consciousness (Brahm). Such a person can travel to any place in the universe and can interfere in the course of nature. He does not have to take birth again, but if he likes he may come down as an Avataar.

KriyaYog is a process of transforming a Nar (man) into Narayan (God). But for it one has to go through intricate Yoga postures, Mudras, breathing processes continually for years, and one must do it only under the guidance of an adept Guru. But this is not quite possible in this fast moving age.

The second altermative for attaining success in Kriya Yog is Sadhana. All one has to do is to stare unblinkingly at a Yantra and chant a Mantra which will help in acquiring a state of Dhyan. As a result thoughtless mind is born. Generally we keep nurturing thousands of thoughts, linking them with the past and future. As a result the delicate neurons come under immense pressure and this may lead to mental breakdown.

On acquiring a thoughtless mind a person becomes one with the universe. He becomes divine and attains super capabilities like mentally ordering someone thousands of miles away. Travelling thousands of miles in a second clairvoyance, clairaudience, telepathy etc.

Underneath is given a special Sadhana for attaining success in Kriya Yog.

Procedure

Perform the **Sadhana on 03.07.21 or any Sunday.** Take a bath early in the morning, wear fresh white clothes and sit on a white cotton Aasan facing the north. Put a wooden plank covered with a cloth before yourself and establish a 'Atma ChetanaYantra' in a copper plate on it. Place the 'Kriya Siddhi Mala' closeby.

Light incense and ghee-lamp and perform Guru worship (according to the method given in 'Dainik Sadhana Vidhi'). Worship the Yantra. Then chant one rosary of Guru Mantra and 11 rosaries of the undergiven Mantra.

Mantra

Om Hreem Hreem Ayeim Kriya Siddhim Om

This must be done for 5 consecutive days. Sit in Padmaasan or Siddhaasan with a straight back and concentrate your gaze on the tip of your nose. Contemplate that a fountain of divine joy is spurting from your heart and permeating each cell of your body. Continue thus for ten minutes. Do this daily. After the completion of Sadhana. disperse the Yantra and rosary in a river.

It is better to do some Yogic exercises and cleansing processes like Neti and Vasti before commencing the Sadhana. Always stick to a controlled vegetarian diet during the Sadhana period.

(Sadhana Packet Rs 450/-)

YAKSHINI SADHANA

A Divine Companion

Yakshini's are ethereal beings that fall in the category of celestial musicians. One of these Yakshinis is the Chandrikaa Yakshini who is the bestower of bliss, wealth and all comforts of life. If appeased in the form of mother she gives foreign tours and rich delicacies, and if appeased as a sweetheart she gives everlasting youth and wealth.

Though won over by a Taantrik Sadhana **this** Yakshini is very amiable and gentle in her appearance who remains with the Sadhak lifelong and looks after all his wants. Rejuvenation of the body, a glowing appearance, bewitching others by one's personality, everlasting youth and vigour. It is advisable to receive the Yakshini Diksha before performing the Sadhana so that the Saadhak is able to imbibe the tremendous energy of the Yakshini the very first time, and does not have to face any obstacles and problems.

Sadhana Procedure

Accomplish this Sadhana on 05.07.21 or any dark moon night. Isolation is a must and one should wear a red Dhoti, put a Guru-Peetaambar over one's shoulders, and sit on a red Aasan facing north after 10:00 in the night. The Saadhak must place a "Chandrika Yakshini Yantra' and Chandrika Yakshini Mala (rosary) before oneself and light an oil-lamp. Then one must worship the Guru and chant one rosary of Guru Mantra for complete and sure success.

Then taking rice grains in the fist and throwing them in all the 10 directions one must construct a subliminal safety circle around oneself-

Apsarpantu Ye Bhootaah Ye BhootaaBhoomi
Sansthitaah Ye Bhootaah Vighna Kartaaraste Nashyantu
Shivaagyaa Akraamantu Bhootaani Pishaachaah Sarvato
DishamSarveshaumvirodhen Poojaa Karya Samaarabhe.

Next one must worship the Yantra with vermilion, unbroken rice grains, incense and flowers and then contemplating on the form of Yakshini request her to make an appearance.

Aavaahan

Aavaahayaami Devi TvamSarvashakti
Pradaayini Surva Mangalroopaa Tvam
Sarva Kaarya Shubhankari
Aavaahayaami Sthaapayaami Namah.
Om Hreem Idam Snaanam
Om Hreem Eiv Dhoopah
Om Hreem Eiv Deep
Om Hreem Idam Vilepanam
Om Hreem Idam Sopkarnnam Neivedhyam.

One must then spray some natural perfume *(Itra)* on oneself and chant 21 rosaries of the undergiven Mantra with the Yakshini Mala.

Om Hreem Chandrike Aagacchh
Icchhitam Saadhay Om Phat

One must not lose nerve if one hears any noise, footsteps, rustling of clothes or tinkling of anklets, nor should one turn back one's head to find out what's going on. This procedure must be followed for two days, after which the Yantra and rosary must be dispersed in a river.

On accomplishment of Sadhana, the Yakshini remains with the Saadhak throughout life fulfiling all one's desires and wishes. Even a woman can peform this Sadhana and can gain, besides a beautiful companion, wealth, beauty, a charming personality and fulfilment of all wishes

(Sadhana Packet - Rs 450/-)

नवस्फूर्ति, नवचेतना एवं सौन्दर्य प्राप्ति के लिए

योग

कपालभाति

आप स्वयं अनुभव करें, कि यह आपके लिए कितना उपयोगी है और आरम्भ कर दें इसका अभ्यास...

नवस्फूर्ति व नवचेतना की प्राप्ति के लिए...

वर्तमान युग में साधना एकदम सरल और जीवन के लिए महत्वपूर्ण है। साधक जब पवित्रता से श्रद्धापूर्वक परमात्मा के नामका जप करता है तो उसका हृदय एवं चिंतन पवित्र होने लगता है। योग, आत्मसाक्षात्कार एवं परमानन्द प्राप्त करने का साधन बताता है एवं शरीर को शुद्ध रखने में मदद करता है। समय-समय पर पत्रिका में भांति-भांति के योगाभ्यास करने के नियम एवं योगों का वर्णन किया जाता है, जिसे अपना कर साधक शरीर को स्वस्थ रख सकते हैं एवं ध्यान साधना में भी यह सभी योग सहायक है अत: इनका उपयोग प्रत्येक साधक-साधिका को करना चाहिए।

कपालभाति तथा भस्त्रिका प्राणायामों में थोड़ा-सा ही अंतर है। कपालभाति में केवल रेचक को जोर लगाकर किया जाता है, जबकि भस्त्रिका में पूरक और रेचक दोनों क्रियाएं जोर लगाकर करनी होती है। कपालभाति करते समय अपना ध्यान केवल रेचक क्रिया पर रखना चाहिए।

श्वास जोर से छोड़ते समय पेट एकदम जल्दी से अंदर की ओर जाएगा। कारण, पेट की वायु झटके के साथ बाहर निकलेगी और पूरक करते समय पेट धीरे-धीरे अपनी स्वाभाविक स्थिति में आ जाएगा।

विधि : पद्मासन या सिद्धासन, सुखासन या वज्रासन में बैठकर अपने श्वास को शांत करें। फिर पूरे जोर से नासिका द्वारा श्वास को बाहर फेंके, श्वास लेने का प्रयास न करें। पहले इस क्रिया को धीरे-धीरे करें फिर थोड़ी गति को बढ़ाकर जल्दी-जल्दी भी कर सकते हैं। ध्यान रखना है कि श्वास को केवल बाहर फेंकना है। पहले पंद्रह-बीस बार कपालभाति करें, फिर धीरे-धीरे अभ्यास को बढ़ाएं और अंत में बाह्य कुंभक करते हुए मूल, उड्डियान और जालंधर बंध कुछ क्षण के लिए लगा सकते हैं। पहले पेट को ढीला करते हुए उड्डियान बंध खोलें, तत्पश्चात् जालंधर और मूल बंध खोलें। श्वास स्वाभाविक। ध्यान आज्ञा-चक्र पर।

लाभ : कपालभाति से ध्यान की एकाग्रता बढ़ती है, क्योंकि इससे कपाल की नस-नाड़ियां शुद्ध होती हैं। जो व्यक्ति ध्यान में बैठते हैं, वे ध्यान में बैठने से पहले कपालभाति करें। इससे इंद्रियाँ वश में आती हैं और मन शांत होता है। मस्तिष्क की नस-नाड़ियों को तनावमुक्त करने तथा सिर दर्द में यह लाभदायक है। •

मंत्र, तंत्र और यंत्रों के इस विशाल समुद्र में अवगाहन करने का प्रयोजन साधनाओं में सिद्धि ही होता है। यह सिद्धि किसी को शीघ्र तथा किसी को बहुत अधिक प्रयास के बाद मिल पाती है, और जिनको बहुत प्रयास के बाद भी नहीं मिलती वे साधनाओं को भ्रमजाल मान लेते हैं। परंतु यह सत्य नहीं है, यदि किसी को मंजिल नहीं मिली तो इसका अर्थ नहीं है, कि मंजिल है ही नहीं। हां, यह अवश्य सत्य है कि मंजिल तक का रास्ता लम्बा था और वहां तक पहुँचते-पहुँचते व्यक्ति निराश हो गया अथवा यह भी हो सकता है कि उसे सही रास्ते का ज्ञान नहीं हो या फिर वो रास्ता मंजिल तक जाता हो, परन्तु किन्हीं कारणों से रुकावट आ रही हो। मनुष्य के मस्तिष्क तन्तुओं में स्वयं के ही विकारों के फलतः कई ऐसी ग्रंथियाँ पड़ जाती हैं, जो साधनाओं में सिद्धि मार्ग को अवरुद्ध कर देती हैं। इस दीक्षा द्वारा ऐसी ग्रंथियों के खुलने की क्रिया प्रारंभ हो जाती है और साधक को शीघ्र ही साधनाओं में सफलता अनुभूत होने लगती है।

उपहारस्वरूप प्राप्त करें

शक्तिपात युक्त दीक्षा

सर्वसाधना सिद्धि दीक्षा

योजना केवल 13-14-15-16 मई 2021 इन दिनों के लिए है

किन्हीं पांच व्यक्तियों को पत्रिका का वार्षिक सदस्य बनाकर उनका सदस्यता शुल्क 2250/- 'नारायण मंत्र साधना विज्ञान', जोधपुर के बैंक के खाते में जमा करवा कर आप यह दीक्षा उपहार स्वरूप निःशुल्क प्राप्त कर सकते हैं। दीक्षा के लिए फोटो आप हमें संस्था के वाट्स अप नम्बर 8890543002 पर भेज दें। इसी वाट्स अप नम्बर पर पांचों सदस्यों के नाम एवं पते भी भेज दे। संस्था के बैंक खाते का विवरण पेज संख्या 64 पर देखें।

दिल्ली कार्यालय - सिद्धाश्रम 8, सन्देश विहार, एम.एम. पब्लिक स्कूल के पास, पीतमपुरा, नई दिल्ली-34
फोन नं. : 011-79675768, 011-79675769, 011-27354368

Printing Date : 15-16 May, 2021
Posting Date : 21-22 May, 2021
Posting office At Jodhpur RMS

RNI No. RAJ/BIL/2010/34546
Postal Regd. No. Jodhpur/327/2019-2021
Licensed to post without prepayment
License No. RJ/WR/WPP/14/2018-
Valid up to 31.12.2021
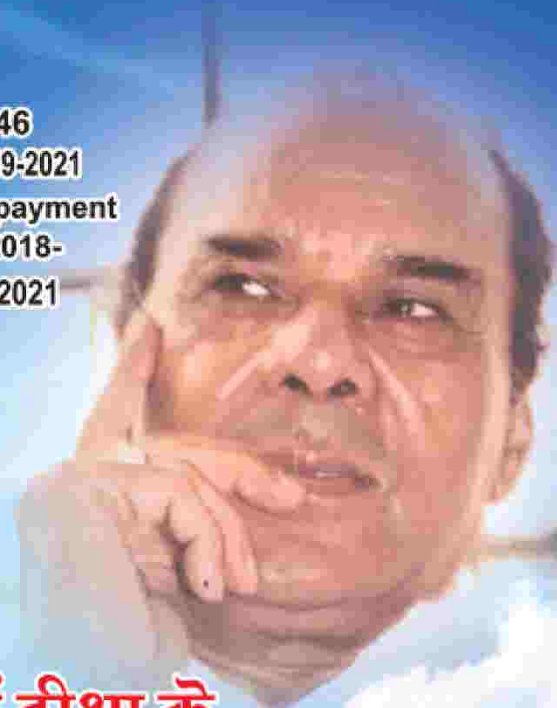
माह : जून एवं जुलाई में दीक्षा के लिए निर्धारित विशेष दिवस

पूज्य गुरुदेव श्री अरविन्द श्रीमाली जी निम्न दिवसों पर साधकों से मिलेंगे व दीक्षा प्रदान करेंगे। इच्छुक साधक निर्धारित दिवसों पर पहुंच कर दीक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

स्थान
गुरुधाम (जोधपुर)
11 जून
04 जुलाई

स्थान
सिद्धाश्रम (दिल्ली)
12-13 जून
10-11 जुलाई

प्रेषक -
नारायण-मंत्र-साधना विज्ञान
गुरुधाम
डॉ. श्रीमाली मार्ग, हाईकोर्ट कॉलोनी
जोधपुर - 342001 (राजस्थान)
पोस्ट बॉक्स नं. : 69
फोन नं. : 0291-2432209, 7960039,
0291-2432010, 2433623
वाट्सअप नम्बर : 8890543002